चीन जैन इतिहास संग्रह

(द्वितीय भाग)

उन पूर्वजों की कीर्त्ति का वर्णन अतीव अपार है,
गाते हमी गुण हैं न उनके गा रहे संसार हैं।
वे धर्म पर करते निछावर तृण-समान शरीर थे,
उनसे वही गम्भीर थे, वर वीर थे, ध्रुव धीर थे॥

— ज्ञानसुन्दर —

श्री जैन इतिहास ज्ञान भानू किरण नं० २

श्री मद्रत्नप्रभसूरीश्वर पादपद्मेभ्यो नमः ।

प्राचीन जैन इतिहास संग्रह ।

(द्वितीय भाग)

[जैन राजाओं का इतिहास]

लेखक
मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज ।

द्रव्य सहायक
श्री संघ – शिवगंज – ज्ञान पूजा की आमन्द से ।

प्रकाशक
श्री रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला
मु० फलोदी (मारवाड़)

ओसवाल संवत् २३९२

वि० सं० १९९२ | प्रति १००० | अमूल्य भेट

प्रबन्ध कर्ता

मास्टर भीखमचन्द

जैन गुरुकुल शिवगंज

श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्प माला—फलोदी (मारवाड़)
का वि० सं० १९७२ से लगाकर वि० सं० १९९१
तक का हिसाब मुद्रित हो चुका है)।।। टिकट
आने पर मुफ्त भेजा जायगा।

प्रकाशक

मुद्रक

नथमल लूणिया

आदर्श प्रेस, केसरगंज अजमेर

सञ्चालक—जीतमल लूणिया

॥ ॐ अर्हन्नमः ॥

प्रमाणवाद

"समय सायंकाल का था, भगवान् भास्कर पश्चिम दिशा की ओर प्रस्थान कर रहे थे, व्यापार से थकावट पाकर व्योपारी लोग वाटिका की ओर अग्रेसर हो रहे थे, पनिहारियों पाणी भर चुकी थी, गोपाल गायों भेंसियों को लेकर ग्राम में आ रहे थे— जिसकी रज से दिशाएं गुदली हो रही थी, पक्षीगण कल-कल शब्द कर अपने घोसलों की तरफ जा रहे थे, छांटी हुई सड़कों पर मोटरें भूँ-भूँ शब्द से गगन गुँजा रही थी, नोकरीदार और विद्यार्थीगण हवाखोरी में चारों ओर घूम रहे थे उस समय दो नवयुवक शिर पर ब्राह्मी का तेल लिए हुवे आपस में कुछ बातें करते जा रहे थे, उनकी बातें इधर उधर की गप्पें नहीं थी पर किसी ग्रन्थ निर्माण विषयक सुन्दर संवाद था उसको पाठकों के बोधार्थ हम यहां उद्धृत कर देना समुचित समझते हैं।

शान्तिचन्द्र—मेहरवान ! आजकल आप क्या लिख रहे हो ?

कान्तिचन्द्र—मैं प्राचीन इतिहास लिख रहा हूँ।

शान्ति—किस विषय का ?

कान्ति—विषय बहुत जटिल है।

शान्ति—पर वह है कौन सी ?

कान्ति—विषय है हमारे पूर्वजों के इतिहास की।

शान्ति—आपने कहां तक लिखा है ?

कान्ति—लिखें क्या कुछ साधन ही नहीं मिलता है।

शान्ति—फिर भी कुछ मिला तो होगा ही ?

कान्ति—बहुत कम मिला है।

शान्ति—क्या आपने कुलगुरु व वहीभाटों से तलाश की हैं ! क्योंकि इस विषय का साहित्य उन लोगों के पास अक्सर मिला करता है।

कान्ति—उन लोगों के पास सच्चा इतिहास नहीं मिलता है यदि कुच्छ मिलता है तो उसमें सत्यता का अंश बहुत कम है केवल इधर उधर की सुनी हुई प्रमाणशून्य बातें ही मिलती हैं वे इतिहास के लिये अनुपयोगी हैं।

शान्ति—मेहरबान ! कुलगुरुओं की वंशावलिए सर्वथा निराधार नहीं हैं उनमें भी बहुत सा तथ्य रहा हुआ है और इतिहास लिखने में वे उपादेय भी हैं।

कान्ति—जहाँ तक इतिहास प्रमाण न मिले वहाँ तक मैं उन वंशावलिए बगैरह को उपादेय नहीं समझता हूँ।

शान्ति—आपका कहना किसी अंश में ठीक है पर ख्याल करो इतिहास तैयार करने के लिये ऐसी सामग्री की भी तो आवश्यकता है ?

कान्ति—भाई साहिब ! इतिहास की सामग्री—शिलालेख,

ताम्रपत्र, दानपत्र शिक्का और घटना के समकालिन प्रमाणिक पुरुषों के लिखे हुए प्राचीन ग्रन्थ ही हो सकते हैं। और इनको ही हम प्रत्यक्ष प्रमाण कहते हैं।

शान्ति—आपका कहना ठीक है पर यह सामग्री एकाद व्यक्ति का इतिहास लिखने में भी पर्याप्त नहीं है तो विशाल भारत के इतिहास के लिये तो नहीं के बराबर हैं। यदि इस प्रत्यक्ष प्रमाण के साथ परीक्षा प्रमाण का सहयोग लिया जाय तो फिर भी सामग्री की विशालता हो सकती है।

कान्ति—इस बात को मानने के लिये मैं तैयार नहीं हूँ।

शान्ति—यह आपकी पढ़ाई नहीं पर एक किस्म का हटवाद है। भला, लीजिये एक उदाहरण चन्द राजा का शिलालेख संवत् ९८० वर्ष का मिला उसी वंश के नन्द राजा का दूसरा शिलालेख १०७१ का मिला। बीच में ९१ वर्ष का कोई भी साधन नहीं मिला, अब आप क्या करेंगे ? एक राजा का ९१ वर्ष राज होना मानेंगे ? या अनुमान प्रमाण से बीच में एक राजा होना स्वीकार करेंगे, जब वंशावलियों में चन्द का पुत्र भीम और भीम का पुत्र नन्द लिखा मिलता है तो क्या आप भीम को स्वीकार करेंगे कि जिसका आप के इतिहास में नाम निशान भी नहीं है।

कान्ति—नाम चाहे भीम हो या दूसरा हो पर ९१ वर्ष में एक राजा होना तो हमको मानना ही पड़ेगा।

शान्ति—जब प्राचीन ग्रन्थ और वंशावलियों को अनादर की दृष्टि से क्यों देखते हो ?

कान्ति—वंशावलिए या कई प्राचीन ग्रन्थ हमने देखे हैं उनमें

घटना, स्थान, व्यक्ति और समय के लिये इतनी गड़बड़ है कि स्थान मिलता है तो व्यक्ति का पता नहीं और व्यक्ति स्थान मिलता है तो समय ठीक नहीं मिलता है इस हालत में उनपर कैसे विश्वास किया जाय।

शान्ति—जिस बात का आपके इतिहास में नाम निशान तक भी नहीं मिलता है वह वंशावलिए या प्राचीन ग्रन्थों में उल्लेख सहज ही मिल आता है क्या यह कम महत्व की बात है अब रहा व्यक्ति स्थल समय और घटनाएं इसके लिये आप लोग की कमजोरी है कि आपके सामने ऐसी कठिनाइयाँ आती हैं तब उनका संशोधन करने में थोड़ा सा ही कष्ट न उठाकर अनादर की दृष्टि से उपेक्षा कर कह देते हो कि यह सामग्री इतिहास के लिये अनोपयोगी है यदि इसके संशोधिन में थोड़ा सा कष्ट उठाया जाय तो इतिहास की बहुत सामग्री प्राप्त हो सकती है मेहता नैणसी की ख्यात और महात्म्य टॉड साहब का 'टॉड राजस्थान' इधर उधर की सुनी हुई बातें और पटावलियों वंशावलियों के आधार पर लिखा हुआ है पर वे ग्रंथ आज कितने उपयोगी समझे जाते हैं ?

कान्ति—टॉड साहब और मेहता नैणसी के ग्रन्थ में बहुत त्रुटिऐं रही हुई हैं ?

शान्ति—त्रुटिएं होगी पर वह कितना उपयोगी है आज अच्छे अच्छे विद्वानों ने उनका संशोधिन कर उन्हीं का ही सहारा लेकर अनेक ऐतिहासिक ग्रन्थों का निर्माण कर यश कमाया है तात्पर्य यह है कि प्रत्यक्ष प्रमाण के साथ परोक्ष

प्रमाण को रख कर इतिहास लिखा जाय तो उसमें विशेष सफलता मिल सकती है।

कान्ति—आप परोक्ष प्रमाण किसको कहते हो ?

शान्ति—आगम और अनुमान को परोक्ष प्रमाण कहा जाता है।

कान्ति—आगम के क्या माने होते हैं ?

शान्ति—प्राचीन समय में लिखे हुए सूत्र या ग्रन्थ, और पट्टावलियों वंशावलियों यह भी आगमों में समावेश हो सकती हैं तथा एक वस्तु का दूसरी वस्तु के साथ सम्बन्ध जोड़ना तथा आगे चलकर वह किसी अंश में सत्य निकलता हो उसे अनुमान प्रमाण कहते हैं।

कान्ति—मेहरवान! आप जी चाहे उतने प्रमाण माने पर मैं तो एक प्रत्यक्ष प्रमाण को ही मानता हूँ।

शान्ति—मेहरवान। एक विद्वान का कहना भी आपने सुना है ?

कान्ति—नहीं ? वह कौनसा है कृपया सुनाइये।

शान्ति—सुनिये "वस्तु की मूल स्थिति पहचानने को मुख्य दो प्रमाणों की आवश्यकता है (१) प्रत्यक्ष प्रमाण (२) परोक्ष प्रमाण (आगम और अनुमान) यद्यपि परोक्ष प्रमाण प्रत्यक्ष प्रमाण के सामने गौण है। तथापि परोक्ष प्रमाण के बिना प्रत्यक्ष प्रमाण का काम भी नहीं चलता है। सच पूछो तो परोक्ष प्रमाण, प्रत्यक्ष प्रमाण का सच्चा मार्ग दर्शक है। परोक्ष प्रमाण की सहायता से ही प्रत्यक्ष प्रमाण आगे चलता है इतना ही नहीं पर प्रत्यक्ष प्रमाण वाले पग पग पर अनुमान प्रमाण का शरण लिया करते हैं।

कान्ति—मैं खण्डन मण्डन में उतरना नहीं चाहता हूँ पर यह

बात तो दावे के साथ कह सकता हूँ कि मैं प्रत्यक्ष प्रमाण को ही मानने वाला हूँ। खैर आप इस समय क्या साहित्य लिख रहे हैं ?

शान्ति—मैं भगवान ऋषभदेव का इतिहास लिख रहा हूँ,

कान्ति—भगवान ऋषभदेव कौन और किस समय में हुए ?

शान्ति—क्या आप भगवान ऋषभदेव को भी नहीं जानते हो ?

कान्ति—नहीं ? मेरी इतिहास की सोध खोज में ऋषभदेव का सम्बन्ध नहीं आया है।

शान्ति—भगवान् ऋषभदेव का नाम तो आपने सुनाही होगा ?

कान्ति—नहीं आज आपके मुँह से ही सुना है।

शान्ति—अरे भाई। क्या आप इतने वर्ष किसी गुफा में रह कर ही दिन पूरे किये थे कि आपने भगवान् ऋषभदेव का नाम तक भी नहीं सुना ? भगवान् ऋषभदेव की मूर्तियों हजारों वर्ष पूर्व की आज भी जनता का जीवन सफल बना रही हैं उदयागिरि खण्डगिरी के शिलालेख और मथुरा के कांकाली टीला के खण्डहर जिनकी प्राचीनता प्रगट कर रहे हैं।

कान्ति—हाँ मित्र ? मैं बचपन से ही स्कूल में प्रवेश हुआ चौदह वर्ष की पढ़ाई के बाद वहाँ से निकलकर इस कमरे में पुस्तकों का कीड़ा बन रात्रि दिन इनका ही अवलोकन कर रहा हूँ इसका कारण मुझे शिक्षा ही ऐसी मिली और मेरा संस्कार भी इस विषय में सजड़ बन गया कि मैं इतिहास प्रमाण के सिवाय कुछ भी नहीं मानता हूँ। और इसी सोध खोज में मेरा समय जा रहा है।

शान्ति—बलिहारी है आपके सोध खोज की जिन महापुरुष ऋषभदेव को जैन हिन्दू और मुसलमान अपना आदि पुरुष और एक महान् धर्म प्रचारक मानते हैं बड़ा ही अफसोस है कि जगत्प्रसिद्ध भगवान् ऋषभदेव का आप जैसे विद्वानों और खोज करने वालों को नाम तक का ज्ञान नहीं यह कितना अन्धकार ?

कान्ति—मित्र घबरावें नहीं मैं तो इतिहास को ही मानने वाला हूँ

शान्ति—खैर ! आप यह बतलाइये कि आपके पिता का क्या नाम है ?

कान्ति—मेरे पिता का नाम है केशरीसिंह ।

शान्ति—क्या सबूत ?

कान्ति—दूकान पर मौजूद बैठे हैं आप देखलें ।

शान्ति—केशरीसिंह के पिता का क्या नाम है ?

कान्ति—उमरावसिंह ।

शान्ति—क्या प्रमाण है ?

कान्ति—हमारे पिता मह के समय का उनका फोटू मेरे पास है।

शान्ति—उमरावसिंह के पिता का क्या नाम है ?

कान्ति—रामसिंह ।

शान्ति—क्या सबूत ?

कान्ति—उन्होंने एक सुनार से सोना की कंठी खरीद की थी उसके रुपये सोनार की बही में नांवे मंडा हुआ था जिसके रुपये व्याज सहित मैंने हाल ही चुकाये हैं ।

शान्ति—रामसिंह के पिता का क्या नाम ?

कान्ति—छत्रसिंह ।

शान्ति—क्या प्रमाण है ?

कान्ति—उन्होंने एक तालाब पर छत्री बनाई थी जिसका शिलालेख आज भी मौजूद है ।

शान्ति—छत्रसिंह के पिता का क्या नाम था ?

कान्ति—लक्ष्मणसिंह ।

शान्ति—क्या सबूत ?

कान्ति—आप तीर्थों की यात्रा पधारे उस समय पंडों को कुछ दान दिया था वो पंडों की बही में उसी समय का लिखा मिलता है !

शान्ति—लक्ष्मणसिंह के पिता का क्या नाम था ?

कान्ति—मुझे मालूम नहीं

शान्ति—आपको मालूम न होगा पर लक्ष्मणसिंह के पिता हुए तो होंगे न ?

कान्ति—सबूत नहीं मिलती है

शान्ति—अरे भाई ! सबूत नहीं मिलती होगी पर इतना तो आप अनुमान प्रमाण से जान सकते हो कि बिना पिता पुत्र हो नहीं सकता है तो लक्ष्मणसिंह के पिता तो अवश्य होगा ही ?

शान्ति—कुछ भी हो जब तक इतिहास प्रमाण नहीं मिले वहाँ तक मैं किसी को मानने के लिये तैयार नहीं हूँ ।

शान्ति—बलिहारी है आपके इतिहास की कि आप बिना इतिहास पुत्र के पिता मानने को तैयार नहीं ।

कान्ति—आप कुछ भी कहें पर मैं इतिहास प्रमाण के सिवाय गप्पें मानने को किसी हालत में तैयार नहीं हूँ ।

शान्ति—गप्पों को तो न आप मानते हैं न मैं मानता हूँ पर अनुमान प्रमाण और साधारण ज्ञानवाले यह अवश्य मानते हैं कि पुत्र पिता से ही उत्पन्न होता है इसलिए लक्षमणसिंह का पिता मानना अनुमान प्रमाण से सिद्ध है अतएव हम कह सकते हैं कि प्रत्यक्ष प्रमाण वालों के दो नेत्र हैं कि वह देखी हुई वस्तु को माने पर अनुमान प्रमाण वाले के चार नेत्र हुआ करते हैं कि वे देखी हुई वस्तु माने और अनुमान से भूत भविष्य की वस्तु को भी अनुभव से जान सके।

कान्ति—प्रत्यक्ष प्रमाण में असत्यता का अंश नहीं होता है तब आगम और अनुमान प्रमाण में सत्यता का अंश बहुत कम होता है।

शान्ति—प्रत्यक्ष में केवल सत्यता और अनुमान में असत्यता कहना मात्र पक्षपातियों का ही काम है, हम देखते हैं कि इतिहास प्रमाण वाले भी कई वख्त ऐसे चक्र में पड़ जाते हैं कि उनको अनेक बार अपना इतिहास बदलना पड़ता है और एक दूसरे पर टीका टिप्पणीएं करते हैं कारण कि ये अनुमान और आगम प्रमाणों को अनादर की दृष्टि से देखते हैं पर आखिर तो उनको ही अनुमान व आगम प्रमाणों का सहयोग खोजना पड़ता है।

कान्ति—आपका आगम प्रमाण ऋषभदेव को प्रथम तीर्थंकर और उनका शरीर और आयु इतना बड़ा मानते हैं और अनुमान प्रमाण उस पर सत्यता का सिक्का मारता है पर हम प्रत्यक्ष प्रमाण वाले उनको ऐतिहासिक पुरुष कभी नहीं मानते हैं।

शान्ति—आपकी तो हम बात ही क्यों करें कि आप अपनी दो

चार पीढ़ी के आगे किसी को भी मानने को इन्कार हैं तो ऋषभदेव तो बहुत पुराने समय में हुये हैं, पर आप यह बतलाइये कि आप कितने तीर्थंकरों को ऐतिहासिक पुरुष मानते हैं ?

कान्ति—भगवान् महावीर और पार्श्वनाथ कितनेक नयि सोध वालों के मत से भगवान् नेमिनाथ भी एतिहासिक पुरुष हैं शेष के लिये इतिहास प्रमाण नहीं मिलता है—

शान्ति—अच्छा भाई यह तो आप मानते हो कि आप के पूर्वज लछमणसिंह किसी मनुष्य की ओलाद थे ?

कान्ति—पर इतिहास में यह पता नहीं चलता है कि लछमणसिंह का पिता कोन था ?

शान्ति—इस लिये ही हम कहते हैं कि अनुमान प्रमाण के चार नेत्र होते हैं। और इसी के द्वारा मनुष्य जान सकते हैं कि लच्मणसिंह के पिता का नाम भले ही इतिहास में न हो पर वह मनुष्य की संतान अवश्य है—इसी मुवाफिक नेमिनाथ के पहिले के तीर्थंकरों का नाम भले ही आपके इतिहास में न हो पर वे हुए जरूर हैं। अनुमान प्रमाण से यह बात सिद्ध भी है कारण यह तो कदापि नहीं माना जाय कि नेमिनाथ के पूर्व भारत में कुछ भी नहीं था ? क्योंकि भारत में मनुष्य थे। मनुष्यों को सद् मार्ग बतलाने वाले महर्षि भी थे उनको ही हम तीर्थंकर व महापुरुष कहते हैं और वह काल्पनिक नहीं है जैसे २ सोध खोज होती जायगी वैसे २ हमारा आगम और अनुमान प्रमाण प्रत्यक्ष एवं इतिहास प्रमाण में परिवर्तन होता जायगा। एक समय था

कि इतिहास वाले भगवान महावीर को ऐतिहासिक पुरुष मानने में हिचकते थे उस समय भी हमारा आगम प्रमाण महावीरों को तीर्थंकर मानते थे जैसे ऋषभदेव को मानते हैं। इतिहासकारों ने महावीर को ऐतिहासिक पुरुष माना तो पार्श्वनाथ के लिये संकीर्णता बतलाई पर फिर भी पार्श्वनाथ को ऐताहासिक महापुरुष माना तो भगवान् नेमिनाथ के लिये साधनों के अभाव वह ही बात उपस्थित हुई पर हाल ही में काठियावाड़ प्रान्त के ताम्रपत्र ने साबित कर दिया है कि नेमिनाथ ऐतिहासिक पुरुष हैं इस भाँति हमारा अनुमान और आगम प्रमाण ऐतिहासिक प्रमाण बनता जा रहा है।

कान्ति—आपके तीर्थंकरों का शरीर प्रमाण आयुष्य जो आपके आगमों में लिखा मिलता है उसे आप किसी प्रमाण से सिद्ध कर बतला सकते हो ?

शान्ति—जो चार पाँच पुस्तक के पूर्व अपने पूर्वजों को मानने के लिये ही तैयार न हो उनके लिये मैं तो क्या पर ब्रह्मा भी समर्थ नहीं है पर सभ्य समाज इस बात को स्वीकार कर सकती है कि लाखों क्रोड़ों नहीं पर असंख्य वर्ष पूर्व इतना शरीर और आयुष्य होना किसी प्रकार का आश्चर्य नहीं है। आप जब गणित शास्त्र से हिसाब लगाइये कि १००० वर्ष पूर्व के मनुष्यों का शरीर आयुष्यः कितना था एवं ५००० वर्ष पहिले—उसके आगे दश हजार वर्ष पहिले के मनुष्योंका शरीर और आयुष्य कितना बड़ा होगा यदि एक हजार वर्ष पूर्व के मनुष्यों का एक इंच शरीर ऊंचा और पाँच वर्ष की आयुष्य अधिक मानलें तो क्रमशः असंख्य वर्ष पूर्व के मनुष्यों का

देह मान और आयु कितना बड़ा होगा । इस बात को केवल हमको ही नहीं पर सभ्य समाज को भी मानना पड़ता है । और यह बात भी सोलह आने सच्ची है जब ऋषभदेव का समय ही असंख्य कोटा कोटी वर्ष पूर्वका है उनके शरीर और आयुष्य में शंका को स्थान ही नहीं मिलता है "जरा आंख उठा के देखो पंजाब और सिन्ध की सरहद पर "हरप्पा" नामक स्थान में खोद का काम करते समय जो भूमि के अन्दर एक नगर निकल आया है उस नगरका अनुमान देश हजार वर्ष पूर्व का बतलाते हैं यद्यपि हमारे इतिहास की घुड़दौड़ वहाँ तक नहीं पहुँची है तथापि उस भूमि से निकले हुवे तमाम पदार्थ इतने लम्बे चौड़े हैं कि आज के मनुष्यों से बहुतबड़े हैं" और भी ऐसे कई पदार्थ मिलते हैं कि जिस पर दृष्टि डालने से हमारा अनुमान ठीक प्रमाणिक कहा जा सकता है । मेहरबान ? आप इतिहास प्रमाण के साथ अनुमान और आगम प्रमाण का सहयोग लिया करें कि आपके दो नैत्र की जगह चार नैत्र हो जाय और फिर विशाल दृष्टि से काम करें कि आपका इतिहास सर्व मान्य और उपयोग हो । अस्तु क्यों पधारते हो ?

कान्ति—जी हाँ आपका ख्याल ठीक है अब मैं भी समझ गया कि अनुमान और आगम प्रमाण इतिहास के लिये बड़े उपकारी हैं । क्या वंशावली वालों से पूछने पर हमारे पूर्वजों का इतिहास मिल सकेगा ?

शान्ति—हाँ जरूर मिल सकेगा और उनकी सहायता से ही आपका इतिहास सुन्दर और प्रमाणिक बनेगा ।

कान्ति—अच्छा मित्र। मैं आपका उपकार मानता हूँ फिर कभी मिलिये ?

शान्ति—आपका समय मैंने बहुत लिया है क्षमा करें। जयजिनेन्द्र?

कान्ति—जयजिनेन्द्र ?

मरुधर में ज्ञान प्रकाश

रत्नप्रभाकर ज्ञान पुष्पमाला।
प्रकाश किया सब देश में॥
इतिहास भक्ति उपदेश चर्चा।
तत्त्वज्ञान समझाया रहस्य में॥
एकसौ सेंतालीस जातिके पुष्प।
तीन लाख प्रतिएँ विशेष में॥
मरुधर की मुनि 'ज्ञानसुन्दर'।
उन्नति चाहें हमेश में॥ १॥

'गुण'

दो शब्द ।

यह बात तो निर्विवाद सिद्ध है कि एक समय जैन धर्म राष्ट्रधर्म था । जैनधर्म्म के उपदेशकों ने भारत के प्रत्येक प्रान्त में घूम घूम कर जनता को जैन धर्म की शिक्षा-दिक्षा देने में भरसक प्रयत्न किया था इतना ही नहीं पर भारत के अतिरिक्त अन्य देशों में भी जैन धर्म का प्रचार करने में खूब उत्साह पूर्वक प्रयत्न किया था और उसमें उन्हों को सफलता भी काफी मिली आज इतिहास की सोध एवं खोज से यह निश्चय हो चुका है कि आष्ट्रीया, अमेरिका, मंगोलिया, अर्बस्तान, यूनान, मिश्र, चीन, जापान और मक्का-मदीनादि प्रदेशों में जैनधर्म का काफी प्रचार था पूर्वोक्त प्रदेशों में खोद का काम करते समय जैनधर्म के प्राचीन स्मारक उपलब्ध हो रहे हैं पर खेद इस विषय का है कि इन सब बातो का सिलसिलेवार इतिहास नहीं मिलता है आज हमें यही मालूम नहीं है कि किस समय कौन राजा जैन धर्म का क्या क्या कार्य किया इत्यादि । फिर भी सोध-खोज करने पर यत्रतत्र बिखरे हुए ऐसे साधन मिल भी सकते हैं जिनको एकत्र किया जाय तो एक महत्वपूर्ण इतिहास तैयार हो सकता है इसी उद्देश्य को लक्ष में रख कर मैंने छोटे छोटे ट्रेक्ट द्वारा "प्राचीन जैन इतिहास संग्रह" लिखना प्रारम्भ किया है आशा है कि हमारे इतिहास लेखक इन पुस्तकों द्वारा अवश्य लाभ उठावेंगे—

"ज्ञानसुन्दर"

卐

श्री जैन इतिहास ज्ञान भानू किरण नं० २

॥ श्रीरत्नप्रभसूरीश्वरपादपद्मेभ्योनमः ॥

प्राचीन जैन इतिहास संग्रह

[द्वितीय भाग]

जैन राजाओं का इतिहास

卐

जैन धर्म वीर क्षत्रियों का धर्म है, इस ओसर्पिणि काल अपेक्षा श्री ऋषभादि चौवीस तीर्थकर, भरतादि बारह चक्रवर्ति, रामचन्द्रादि नौ बलदेव कृष्णादि नौवासुदेव, सम्राट रावणादि नौ प्रति वासुदेव, और मंडलीक राजा महाराजा इस धर्म के उपासक ही नहीं पर कट्टर प्रचारक थे, इसलिये ही जैन धर्म विश्व धर्म कहलाता था और जहाँ तक जैन धर्म राष्ट्रीय धर्म रहा वहां तक संसार की उत्तरोत्तर उन्नति होती रही, सुख और शान्ति में जनता अपना कल्याण करने में तत्पर रहती थी।

वर्त्तमान समय केवल वैश्य जाति ही जैन धर्म पालन करती देख कई लोग कह उठते हैं कि जैन धर्म मात्र वैश्य जाति का

ही धर्म है पर जिन महानुभावों ने इतिहास पढ़ने का थोड़ा बहुत कष्ट उठाया है वह बखुबी जान सकते हैं कि जैन धर्म एक राष्ट्रीय धर्म है। भारत को आर्यवर्त और अहिंसा प्रधान देश कहा जाता है इस से ही सिद्ध होता है कि भारत में जैन धर्म की ही प्रधानता थी, वेद काल के पूर्व जैन धर्म का अस्तित्व तो खुद वेद ❀ और पुराण ही बतला रहे हैं।

---

* निम्न लिखित प्रमाणों को पढ़िये—

ॐ नमोऽर्हन्तो ऋषभो ॥

अर्थ—अर्हन्त नाम वाले (व) पूज्य ऋषभदेव को नमस्कार हो।

(यजुर्वेद)

ॐ रक्ष रक्ष अरिष्ट नेमि स्वाहा ॥

अर्थ—हे अरिष्ट नेमि भगवान् हमारी रक्षा करो।

(यजुर्वेद अध्य० २६)

ॐ त्रैलोक्य प्रतिष्ठितानां, चतुर्विंशति तीर्थकराणां।
ऋषभादि वर्द्धमानान्तनां, सिद्धानां शरणं प्रपद्ये ॥

अर्थ—तीन लोक में प्रतिष्ठित श्री ऋषभदेव से आदि लेकर श्री वर्द्धमान स्वामी तक चौबीस तीर्थंकरो (तीर्थ को स्थापन करने वाले) हैं उन सिद्धों की शरण प्राप्त होता है।

(ऋग्वेद)

ॐ पवित्रं नग्नमुपवि (ई) प्रसान हे येषां नग्ना (नग्नये) जातिर्येषां वीरा ॥

अर्थ—हम लोग पवित्र, "पाप से बचाने वाले" नग्न देवताओं को प्रसन्न करते हैं जो नग्न रहते हैं और बलवान् हैं। (ऋग्वेद)

कुदरत का यह एक अटल नियम है कि प्रत्येक पदार्थ की उन्नति और अवनीति अवश्य हुआ करती है, भगवान् महावीर प्रभु के पूर्व भारत में यज्ञवादियों का खूब जोर बढ़ रहा था, अश्वमेद-गजमेद, नरमेद, अजामेदादि यज्ञ के नाम पर असंख्य निरपराधी मूक् प्राणियों के बलीदान से रक्त की नदियां बह रही थी, इस अशान्ति ने जनता में त्राही त्राही मचा दी थी। वर्ण जाति उपजाति मत पंथ के कीचड़ में फँस कर जनता अपनी शक्ति का दुरुपयोग कर रही थी, उच्च नीच का जहरीला विष सर्वत्र उगला जा रहा था, दुराचार की भट्टियें सर्वत्र धधक रही थी, नैतिक, सामाजिक, और धार्मिक, पतन अपनी चरम सीमा तक पहुँच चुका था, जनता एक ऐसे महापुरुष की प्रतिक्षा कर रही थी कि वे उन उलझनों को शान्ति पूर्वक सुलझा के शान्ति स्थापित करें।

रेवतान्द्रौ जिनो नेमियुगादि र्विमला चले।
ऋषीणामाश्रमा देवमुक्ति मार्गस्य कारणम्॥ १॥

(महाभारत)

अष्ठ षष्टिषु तीथषु यात्रायां यत्फलं भवेत्।
आदिनाथस्य देवस्य स्मरणेनापि तद्भवेत्॥

(शिवपुराण)

मरुदेवि च नाभिश्चभरते: कुल सत्तमः।
अष्टमोमरुदेव्यां तु नाभे जति उरुक्रमः॥
दर्शयन वत्मवीराणं सुरासुर नमस्कृतः।
नीति त्रितयकर्त्तायो युगादौ प्रथमोजिनः॥

(मनुस्मृति)

ठीक उसी समय भगवान् महावीर ने अवतार धारण कर जनता के कल्यानार्थ अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, सन्तोष, प्रेम और परोपकार का संदेश भारत के चारों ओर बुलन्द आवाज से पहुँचाया। नीच उच्च का भेद भाव को मिटा के प्राणी मात्र को धर्म के अधिकारी बनाये। आत्म कल्याण कर स्वर्ग मोक्ष का हक्क सब को समान रूप में दे दिया। फिर तो देरी ही क्या थी, सर्वत्र शन्ति का साम्राज्य वरतने लगा। भगवान महावीर का प्रभाव केवल साधारण जन पर ही नहीं, पर बड़े बड़े राजा महाराजा पर भी खूब पड़ा, और क्रोड़ों की संख्या में महावीर के, शान्ति झंडे के, नीचे जनता शान्ति पा रही थी। आज हम भगवान् महावीर के उपासक कतिपय राजाओं का ही यहां उल्लेख करना चाहते हैं—जो कि जिसके उल्लेख जैनों के प्राचीन एवं प्रामाणिक अंगोपांग सूत्रों में विद्यमान् हैं—

(१९) विशाला नगरी के—महाराजा चेटक, कट्टर जैन धर्मी थे। इन्होंकी बेहन त्रिशला महाराजा सिद्धार्थ को ब्याही थी जिन्होंकी कुक्ष से भगवान महावीर ने पवित्र जन्म लिया था। महाराजा चेटक के अधिकार में काशी कोशल के १८ गण राजा थे वह भी जैनधर्मोपासक ही थे। इन सबों ने भगवान् महावीर की परमोपासना की तथा अन्तिम समय भगवान् के पास पावापुरी में पौषध व्रत किये थे।

"निरियावलिका, और भगवती सूत्र"

(२०) सिन्धु सोवीर देश के—महाराजा उदाई व महाराणी प्रभावती पक्के जैनी थे। आपने अपने भाणेज केशी

कुमार को राज देकर भगवान् महावीर के चरण कमलों में भगवती जैन दीक्षा ग्रहण कर मोक्ष पद प्राप्त किया था। "आपके पुत्र अभिचकुमार तथा महाराजा केशी ने भी जैनधर्म का खूब प्रचार किया।

"भगवती सूत्र"

(२१) आवन्ती नगरी के—महाराजा चंडप्रयोधन जैन धर्म बड़ी रुचि से पालन करते थे।

"उत्तराध्ययन सूत्र"

(२२) कपीलपुर नगर के महाराजा संयति ने भगवती जैन दीक्षा को पालन कर अक्षय सुख को प्राप्त किया था।

"उत्तराध्ययन सूत्र" अ० १८

(२३) दर्शानपुर नगर के—महाराजा दर्शानभद्र ने एक समय भगवान् महावीर का स्वागत बड़ा ही शानदार किया था पर मन में ऐसा अभिमान आया कि भगवान् के उपासक अनेक राजा हैं पर मेरे जैसा स्वागत शायद ही किसी ने किया हो ? यह बात वहाँ पर आये हुए शक्रेन्द्र को ज्ञात हुई जिसने वैक्रय से अनेक रूप बनाया कि जिसको देखते ही राजा दर्शानभद्र का गर्व गल गया। अब वह इस सोध में था कि इन्द्र के सामने मेरा मान कैसे रह सके। आखीर उन्होंने ठीक सोच समझ के महावीर प्रभु के पास भगवती जैन दीक्षा स्वीकार करली। यह देख इन्द्र ने आकर उन मुनि के चरणों में शिर झुका कर कहा

हे मुनि सच्चा मान रखने वाले संसार भर में एक आप ही हो, दशार्णभद्र मुनि ने उसी भव में मोक्ष प्राप्त कर ली।

"उत्तराध्ययन सूत्र"

(२४) आवंती देश का सुदर्शन नगर के—महाराजा युग बाहु और उनकी महाराणी मैणराय पक्के जैन थे।

"उत्तराध्ययन सूत्र"

(२५) चम्पा नगरी के महाराजा दधीबाहन भी जैन धर्मोपासक थे जिन्हों की पुत्री चन्दनबाला ने भगवान् महावीर के पास सबसे पहले दीक्षा ग्रहण की थी।

" कल्पसूत्र "

(२६) काशी देश के महाराजा शंख ने भी भगवान् के पास दीक्षा धारण कर कल्याण कर लिया था।

"ठाणायंग सूत्र"

(२७) विदेहदेश मिथीला नगरी के—महाराजा नमि

(२८) कलिङ्ग पति महाराजा करकंडू

(२९) पंचाल देश—कपोलपुर के—स्वामी महाराज दुमई

(३०) गंधारदेश—पुंडवर्धन नगर के—नृपति निग्गई एवं चारों नृपति कट्टर जैन थे। अध्यात्म का अभ्यास करते चारों को साथ ही में ज्ञान हो आया और नाशमान संसार का त्याग कर उन्होंने जैन दीक्षा ग्रहण कर आत्म कल्याण कर गये।

"उत्तराध्ययन सूत्र"

(३१) सुग्रीवनगर के महाराजा बलभद्र जैन श्रमणोपासक थे। आपके एकाएक मृगा पुत्र नामक, कुमार ने भग-

वती जैन दीक्षा पालन कर संसार का पार कर दिया था।

"उत्तराध्ययन सूत्र अ० १९"

(३२) पोलासपुर के—राजा विजयसेन जिन्हों के पुत्र अइमन्ता कुमार ने भगवान् महावीर प्रभु के पास दीक्षा ले के संसार का अन्त किया।

"अंतगड्दशांग सूत्र"

(३३) सावत्थि नगरी के—राजा अदीनशत्रु आदि भी परम जैन थे।

"भगवती सूत्र"

(३४) सांकेतपुर नगर के—राजा चन्द्रपाल जो कि जिन्हों के पुत्र ने महावीर प्रभु के पास दीक्षा ली थी।

(३५) क्षत्रियकुन्ड नगर के—राजा नंदिवर्धन जो भगवान महावीर के वृद्ध भ्राता थे। आपने अहिंसा धर्म का खूब प्रचार किया।

"कल्पसूत्र"

(३६) कोसुंबी नगरी के महाराजा संतानीक और आपकी पट्टराणी मृगावती भी जैन थे जिन्हों की बहिन जयन्ति बाई ने भगवान् महावीर के पास जैन दीक्षा ग्रहण करी थी। महाराजा संतानीक के पुत्र राजा उदाई आदि भी पक्के जैन थे।

"भगवती सूत्र"

(३७) कपीलपुर के जयकेतु राजा भी जैन थे।

"उत्पातिक सूत्र"

(३८) कांचनपुर के महाराजा धर्मशील भी जैन थे।

(३९) हस्तिनापुर के राजा अदीनशत्रु और आपके महा राणी धारणी भी जैन थे जिन्हों के पुत्र सुबाहुकुमार ने भगवान के पास दीक्षा ली थी।

(४०) ऋषभपुर नगर के महाराजा धनब्रह्म और सरसावती राणी जैन धर्मानुयायी थे। आपके पुत्र भद्रनंदी ने प्रभु महावीर के पास जैन दीक्षा ग्रहण की थी।

(४१) वीरपुर नगर के— महाराजा वीर कृष्णमित्र और रति देवी जैन धर्म पालन करते थे, आपके पुत्र सुजातकुमार ने महावीर के पास जैन दीक्षा लेकर उसका सम्यक् प्रकार से पालन किया।

(४२) विजयपुर नगर के–वासवदत्त राजा और कृष्णादेवी जैन धर्मोपासक थे, आपके पुत्र सुवासव कुमार ने महावीर के पास जैन दीक्षा ली थी।

(४३) सोगंधिका नगरी के—अप्रतिहत नामक राजा जैन धर्म के बड़े भारी प्रचारक थे. आपके पुत्र महचन्द्रकुमार ने भी जैन दीक्षा ग्रहण की थी।

(४४) कनकपुर नगर के—प्रीयचन्द्र राजा भी जैन थे, आपके पुत्र वैश्रमण कुमार ने भी भगवान् वीर प्रभु के पास दीक्षा लेकर स्वपर कल्याण किया था

(४५) महापुर नगर के—बल राजा-सुभद्रादेवी जैन धर्मोपासक थे, आपके पुत्र महाबल कुमार ने ५०० अंतेवर और राज्य त्याग कर जैन दीक्षा ली थी।

(४६) सुघोष नगर के— अर्जुन राजा भी जैन थे, आप के पुत्र भद्रनन्दी ने बड़े वैराग्य के साथ भगवान महावीर के पास जैन दीक्षा ग्रहण करी।

(४७) चम्पा नगरी के—राजा दत्त और रत्तवन्ती राणी जैन धर्म को प्रेम पूर्वक पालन करते थे, आपके पुत्र महिचन्द्र ने राजऋद्धि और ५०० अंतेवर का त्याग कर जैन दीक्षा ली थी।

(४८) साकेत नामा नगर के—राजा मित्रनन्दी और श्री कान्ता राणी जैन धर्मोपासक थे, आपके पुत्र वरदत्त कुमार ने भगवान महावीर के चरण कमलों में भगवती जैन दीक्षा को ग्रहण कर स्वपर कल्याण किया।

(नं० ३९ से ४९ तक के दश नृपतियों का अधिकार विपाक सूत्र द्वितीय श्रुतस्कन्ध के १० अध्ययनों में विस्तार पूर्वक लिखा मिलता है)

(४९) अमलकम्पा नगरी के राजा सेत जैनधर्मी थे, जिन्होंने भगवान् महावीर प्रभू के आगमण समय बड़ा ही जोरदार स्वागत किया था।

"रायपसेणी सूत्र"

(५०) श्वेताम्बिका नगरी के राजा प्रदेशी वो सूरिकान्त कुँवर भी जैनधर्म के परमोपासक थे। राजा प्रदेशी कठिन व्रत तपश्चर्या कर के सूरियाभ नामका देव हुआ एक भवकर मोक्ष जायगा।

"राय पसेणी सूत्र"

(५१) हस्तिनापुर के राजा शिव पहिले तापसी दीक्षा ली थी और इसका मत था कि संसार भर में सात द्वीप और सात समुद्र ही हैं, परन्तु जब भगवान् महावीर का समागम होने से

आपको अपनी—मान्यता मिथ्या मालूम हुई और भगवान् वीर के सिद्धान्त को स्वीकार कर जैन दीक्षा ग्रहण कर ली।

"भगवती सूत्र"

(५२) राजा वीरांग (५३) राजा वीरजस इन दोनों नृपतियों ने भगवान् महावीर के पास दीक्षा लेकर मोक्षपद को प्राप्त किया।

"ठाणायांग सूत्र ठा० ८"

(५४) पावापुरी के राजा हस्तपाल जैनधर्म के कट्टर प्रचारक थे—जिन्होंने भगवान् महावीर को आग्रह पूर्वक विनती कर अन्तिम चातुर्मास अपने यहाँ कराया और उसी चातुर्मास में भगवान् महावीर का निर्वाण हुआ।

"कल्पसूत्र"

उपरोक्त राजाओं के अलावा महाराज प्रशान्नजीत,[५५] श्रेणिक[५६] (बिम्बसार), सम्राट् कोणक[५७] (अजात शत्रु) और उदाई[५८] राजा भगवान् महावीर प्रभु के परम भक्त थे जिन्होंने पाश्चात्य देशों में भी जैनधर्म का प्रचूरता से प्रचार किया जिन्हों का इतिहास हम पहिले भाग में लिख आए हैं और छोटे बड़े अनेक राजा भगवान् महावीर प्रभु के उपासक थे, परन्तु हमारी शोध एवं खोज में जितने नृपतियों का इतिहास मिला है उसको ही यहाँ संक्षिप्त में उल्लेख किया है, जिसका कारण इस समय जनता को बड़े ग्रन्थ पढ़ने की अरूचि, मगज की कमजोरी, समय का अभाव और न इतिहास से इतना प्रेम है इसलिये यह छोटे छोटे ट्रेक्ट संक्षेप में ही लिख कर सर्वसाधारण के हितार्थ मुद्रित कराया है।

भगवान् महावीर का निर्वाण के बाद भी जैनाचार्यों ने जैन धर्म प्रचार के लिये भरसक प्रयत्न किया और अनेक राजा महाराजाओं को जैनधर्म की दीक्षा देकर जैन बनाये जिनका संक्षिप्त इतिहास यहाँ दे दिया जाता है—

(१) श्रीमाल नगर का राजा जयसेन जैन राजा

पूर्व भारत में भगवान् महावीर ने शुद्धि और संगठन की मशीन स्थापन कर लाखों क्रोड़ों अजैनों को जैन बनाया। तब इधर मरुभूमि में श्री पार्श्वनाथ भगवान् के पांचवें पद पर स्वयंप्रभसूरि का शुभागमन हुआ। आप अनेक मुनियों के परिवार से श्रीमाल नगर के उद्यान में पदार्पण किया। उस समय श्रीमाल नगर में यज्ञ की बड़ी भारी तैयारियाँ हो रही थी—लाखों पशु पक्षियों को बलिदानार्थ एकत्र किये गये थे, आचार्य श्री को खबर होते ही उन्होंने राजसभा में जाकर "अहिंसा-परमो धर्मः" का बड़ी खूबी से उपदेश दिया, फल स्वरूप में असंख्य प्राणियों को अभय दान दिलवा के ९०००० घरों को जैन बनाये। वे आज 'श्रीमाल' महाजन के नाम से मशहूर है। जिसमें वहाँ का राजा जयसेन मुख्य था।

"उपकेश गच्छ पट्टावली"

(२) पद्मावती नगरी का राजा पद्मसेन-जैन राजा

आबू के पास पद्मावती नगरी के राजा पद्मसेन ने भी एक बड़ा भारी यज्ञ करना आरम्भ किया "जोकि उस समय यह प्रथा सर्वत्र प्रचलित थी। यज्ञ में बलिदान देना तो उन लोगों

की साधारण क्रिया थी जिसकी खबर श्रीमाल नगर में विराजमान आचार्य स्वयंप्रभसूरि को हुई। आप श्रीमाल नगर के अनेक भावुकों के साथ पद्मावती नगरी में पहुँचे और यज्ञवादियों के साथ शास्त्रार्थ कर उनको सप्रेम समझा कर यज्ञ में होता हुई लाखों मूक् प्राणियों की बलि को रोक कर राजा पद्मसेनादि ४५००० घरों को जैनधर्मी बनाये, वे आज पर्यन्त प्रागवट (पोरवालों) के नाम से प्रसिद्ध हैं जिन्हों को पद्मावती पोरवाल भी कहते हैं कारण आचार्य हरिभद्रसूरि ने बाद में भी पोरवाल बनाये थे।

"उपकेश गच्छ पट्टावली"

(३) चन्द्रावती नगरी का राजा चन्द्रसेन-जैनराजा

यह श्रीमाल नगर के राजा जयसेन का लोतासा पुत्र है अपने भाई भीमसेन के अनबन के कारण अपने नाम पर नई नगरी चन्द्रावती बसा के अपनी राजधानी कायम की और जैन धर्म का प्रचार करने में खूब ही प्रयत्न किया।

"उपकेश गच्छ पट्टावली"

(४) शिवपुरी का राजा शिवसेन जैन राजा

यह चन्द्रसेन का लघु बन्धु था। इसने शिवपुरी (सिरोही) नगरी बसा के वहाँ का शासन किया—यह नृपति भी जैनधर्म

१—राजा चन्द्रसेन ने आबू के पास चन्द्रावती नगरी आबाद की वह विक्रम की तेरहवीं शताब्दी तक तो अच्छी उन्नति पर थी कहा जाता है कि उस समय जैनों के ३०० मन्दिर इस नगरी में थे पर आज तो केवल उसके खंडहर ही दृष्टिगोचर होते हैं।

का कट्टर प्रचारक था ।

"उपकेशगच्छ पट्टावली"

(५) उपकेशपुर का महाराजा उत्पलदेव–जैनराजा

मारवाड़ की मुख्य राजधानी और वाममार्गियों का केन्द्र स्थल उपकेशपुर था । यहाँ के शासन कर्त्ता महाराजाधिराज उत्पलदेव थे । आचार्य स्वयंप्रभसूरि के पट्टधर महाप्रभाविक स्वनाम धन्य आचार्य रत्नप्रभसूरि जो आप विद्याधर कुल भूषण थे अनेक विद्याओं के पारगामी और चतुर्दश पूर्वधारी भी थे । ५०० मुनियों के परिवार से अनेक कठिनाइयों व उपसर्ग को सहन करते हुए उपकेशपुर में पधारे । पर आप किसके महमान ? कौन आपका स्वागत करें ? कहाँ अन्न जल मकानादि ? पर जिन्हों के हृदय में धर्म प्रचार की धगास हो उन्हों को पूर्वोक्त साधनों की क्या परवाह ? आचार्य देव ने अरण्य में ध्यान लगा दिया और हमेशा तप बृद्धि होती रही । कई मुनियों के तपश्चर्य का पारण आने पर नगर में भिक्षा के लिये गये पर ऐसा कोई घर न पाया कि जिसके घर की जैन साधु भिक्षा ले सके, कारण उस नगर में सर्वत्र मांस मदिरा का प्रचार प्रत्येक घर में था, मुनि जैसे गये थे वैसे ही वापिस लौट आए पर आपकी कठोर तपश्चर्या का प्रभाव नागरिकों पर ही नहीं वरन् वहाँ की अधिष्टायका चामूण्डा देवी पर भी काफी पड़ा । राजा के जमाई अर्थात् मंत्री पुत्र को सर्प काटना और चामूण्डा देवी का चमत्कार दिखाना, सूरीश्वरजी के कार्य में निमित्त कारण हुए, राजा प्रजा ने सत्य धर्म सुना और मिथ्या मार्ग का त्याग कर

लाखों की संख्या में जैन धर्म को स्वीकार कर सूरिजी के परमोपासक बन गये। पट्टावलियों से विदित होता है कि आचार्य रत्नप्रभसूरि उस प्रान्त में घूम के १८४००० घरों को जैन बना के उनका नाम 'महाजन वंश' रखा।

उस समय उन आचार्यों की यह भी पद्धति थी कि जहां नये जैन बनाये वहां अनेक ग्रंथों की रचना उनके पठन पाठन के लिये विद्यालयों और सेवा-पूजा के लिये, जैन मन्दिरों की स्थापना करवाया करते थे और इन बातों की उनको परम आवश्यकता भी थी और उन लोगों की सन्तान आज पर्यन्त जैन धर्म पालन करती है यह सब उन महर्षियों की सुन्दर पद्धति का ही मधुर फल है। आचार्य स्वयंप्रभसूरि ने श्रीमाल, पद्मावती, चन्द्रावती, शिवपुरी आदि अनेक नगरों में तथा आचार्य श्री रत्नप्रभसूरि ने उपकेशपुर तथा उसके आस पास में अनेक जैन मन्दिरों, जैन विद्यालयों की स्थापना व प्रतिष्ठा करवाई। उनके अन्दर से कतिपय स्थान तो आज पर्यन्त विद्यमान हैं। आचार्य रत्नप्रभसूरि के प्रतिबोधित नूतन जैनों में महाराज उत्पलदेव मुख्य थे। यह घटना उपकेशपुर में वीरात् ७० वर्ष में बनी। आगे चल कर उस महाजन वंश का ही नाम उपकेश वंश हुवा और उपकेश वंश का

१—आचार्य रत्नप्रभसूरि का एक शिष्य के साथ आना, भिक्षा न मिलने पर भारी काट के लाना, रूई का सर्प बना के राजपुत्र को कटाना, फिर विष उतारके जैन बनाना इत्यादि बातें अज्ञ लोग कहा करते हैं पर यह सब निराधार गप्पें ही हैं इस विषय में देखो मेरा लिखा "जैन जाति महोदय प्रथम खण्ड"।

अपभ्रंश ही ओसवाल है। आज श्रीमाल पोरवाल और ओसवाल जातियाँ परम्परा से जैनधर्म पालन करती आई हैं वह आचार्य स्वयंप्रभसूरि और आचार्य रत्नप्रभसूरि का ही उपकार का सुन्दर फल है। महाराजा उत्पलदेव के बाद सारंगदेव, नागुदेव आदि २८ पीढ़ी तक उपकेशपुर में राज करते हुए जैन धर्म की वृद्धि की। उनका रोटी बेटी व्यवहार अजैन राजपूतों के साथ भी था कि जिससे वे जैन धर्म का प्रचार करने में सफलता प्राप्त करली थी।

"उपकेशगच्छ पट्टावलि"

(६) कोलापुर पट्टन (कोरंटो) का राजा कनकसेन 'जैन राजा'

आचार्य रत्नप्रभसूरि की आज्ञा लेकर उपकेशपुर से ४६५ मुनियों ने विहार किया था जिसमें मुख्य मुनि कनकप्रभ थे उन्होंने कोलापुर पट्टन (कोरंटा) में चातुर्मास किया वहाँ का राजा कनकसेन को धर्मोपदेश देकर उनके साथ बहुत से अजैनों को शुद्धि द्वारा जैन-धम की शिक्षा दीक्षा दे जैन बनाया। वहाँ के भावुकों ने भगवान् महावीर का एक विशाल मन्दिर बनाया जिसकी प्रतिष्ठा आचार्य रत्नप्रभसूरी के करकमलों से हुई जो उपकेशपुर के महावीर मन्दिर की प्रतिष्ठा का लग्न में आचार्य श्री ने दो रूप बना के एक उपकेशपुर दूसरा कोलापुर में प्रतिष्ठा करवाई थी महाराजा कनकसेन ने जैन-धर्म का खूब प्रचार किया

⊛ कोरंटा नगर बहुत प्राचीन है जिसके उल्लेख प्रभाविक चारित्र व कल्पसूत्र की टीकाएमें मिलते हैं वह हम फिर आगेके भागों में लिखेंगे।

आपकी कई पीढ़ियें जैन-धर्म का पालन करती हुई बड़ी योग्यता से राज़तंत्र चलाया।

"कोरंट गच्छीय श्री पूज्य अजिन सूरी की एक बही से"

(७) शिव नगर का महाराजा रुद्राट-जैनराजा

आचार्य रत्नप्रभसूरी के पट्टधर आचार्य यक्षदेव सूरी ने एक समय विचार किया कि हमारे पूज्य महर्षियों ने नये २ प्रान्तों में अजैनों को जैन बनाया तो क्या मेरा कर्तव्य नहीं है कि मैं भी किसी प्रान्त में जाकर नये जैन बनाऊँ? मरुधर के पास ही सिंध प्रान्त था और वहाँ प्रचूरता से जीव हिंसा भी हो रही थी आचार्य यक्षदेव सूरि अपने शिष्य मंडल के साथ सिंध की ओर बिहार किया, पर यह कार्य साधारण नहीं था। उन पाखण्डियों के साम्राज्य के बीच में जाकर सत्य मार्ग का उपदेश करना मानों टेढ़ी खीर थी। तथापि आत्मार्पण करने वालों के लिये कुछ कठिन भी नहीं था। आचार्य श्री को बिहार में अनेकोनेक कठि-नाईयों का सामाना करना पड़ा। उस समय उस प्रान्त में शिव-नाम का नगर वाममार्गियों का केन्द्र माना जाता था, वहाँ का शासन कर्त्ता महाराज रुद्राट था, आपके कक्क नाम के एक कुमार भी थे और वह एक दिन अपने साथियों के साथ शिकार करने को जा रहे थे, जिसके भय के मारे बनचर पशु जीव बचाने की गरज़ से इधर-उधर भाग रहे थे। उसी समय आचार्य यक्ष देवसूरि भ्रमन करते वहाँ आ निकले और उन पशुओं की अनुकम्पा लाकर जाते हुए राजकुमार को रोका और अहिंसा परमोधर्मः का उपदेश दिया—जिसका राजकुमार पर इतना प्रभाव पड़ा

कि उसने शिकार का त्याग कर आचार्यश्री को अपने नगर में ले गये—और सूरीश्वरजी ने वहाँ के महाराजा रुद्राटादि नागरिक लोगों को प्रतिबोध देकर जैन बनाये। इतना ही नहीं पर राजकुमार कक्क ने आचार्यश्री के चरण कमलों में भगवती जैन दीक्षा स्वीकार कर अपनी जननी जन्म भूमि का उद्धार किया। उस प्रान्त में मेदनी जिनालयों से मंडित करवादी। मुनि कक्कदेव को योग्य समझ आचार्यदेव ने अपने पट्टपर आचार्य पद से विभूषित किया। सिन्ध प्रान्त में जैन-धर्म का खूब प्रचार हुआ। विक्रम की तेरहवी शताब्दी तक केवल उपकेश गच्छ के श्रावकों की देख रेख में ५०० जैन मन्दिर※ विद्यमान थे। श्रीमान् लुणाशाह जैसे धनी मानी उस प्रान्त में बसते थे। पर खेद है कि मुसलमानों की जुल्मी सत्ता के कारण सिंध प्रान्त आज जैनों से निर्वासित देखाई दे रही है। क्या जैनाचार्य यह साहस कर सकते हैं कि वे ऐसे प्रांतों में विहार कर पुनः जैन संस्कृति का प्रचार करें ?

"उपकेश गच्छ पट्टावली"

※ तानू चेथ कक्कसूरि सिन्धु देशे मया सह ।
आगच्छ तय तस्तत्र किं कर्त्ता सौ नरेश्वः ॥ ४४४ ॥
यस्य देव गृहस्येछा द्वेछावापिय स्पतां ।
पूरये तत्रय देव गृह पंचशती ममः ॥ ४४५ ॥
श्रावका अथ संख्या ताश्चल तातोज्जटि त्यापि ।
सक्लेश कारक स्थान दूरतः परिवर्ज्जयेत् ॥ ४४६ ॥

"उपकेश गच्छ चरित्र"

(८) भद्रावती नगरी का राजा शिवदत्त "जैनराजा"

जैसे आधुनिक आचार्य जैनियों का संगठन तोड़-तोड़ के अपने बाड़ा बन्धन में सलग्न हैं उसी भाँति पूर्वाचार्य नये २ प्रांतों में अजैनों को जैन बना के उनका संगठन बल बढ़ाने में संलग्न थे। आचार्य कक्क सूरि एक समय विहार कर सौरठ की ओर जा रहे थे पर रास्ता भूल जाने से एक पहाड़ों के बीच भयंकर जंगल में जा निकले। वहाँ एक देवी को नरबली देने की तैयारी हो रही थी जिसकी बली दी जा रही थी वह युवक भी वहाँ उदास बदन से बैठा हुआ था। पर उनके चेहरे से यह पाया जाता था कि यह कोई भाग्यशाली है। आचार्य श्री ने अपने आत्मबल और उपदेश द्वारा उन घातिकों को समझा कर उस भव्य को प्राण दान दिया— वह था भद्रावती के राजा शिवदत्त का लघु पुत्र देवगुप्त कुँमार। उसने आचार्यश्री का महान उपकार मान अपने नगर में ले गया। आचार्यश्री ने राजा एवं प्रजा को अहिंसा मय धर्म सुनाया, जिसका असर उपस्थित श्रोताओं पर इस कदर हुआ कि उन्होंने उसी समय जैन-धर्म को स्वीकार कर आचार्यश्री के परमोपासक बन गये, कालान्तर उसी देवगुप्तकुमार ने आचार्य श्री के पास जैन दीक्षा स्वीकार कर ली और आचार्य श्री उसको सर्व प्रकार से योग्य समझ अपने पट्ट पर स्थापन कर सिद्धगिरी की शितल छाया में अपना कल्याण किया। आचार्य देवगुप्त सूरि ने कच्छ एवं सोरठ में जैन-धर्म का खूब प्रचार किया।

"उपकेश गच्छ पट्टावली"

(६) पाटलीपुर के नौनन्द राजा भी जैन थे ।

जिन्हों का इतिहास पहिले भाग में लिखा गया है ।

(१८) पाटलीपुर के मौर्य मुगटमणि सम्राट्
चन्द्रगुप्त[१८] बिन्दुसार[१९] अशोक[२०] और सम्राट् सम्प्रति[२१]

यह सब जैन-धर्मोपासक ही नहीं पर जैन-धर्म के कट्टर प्रचारक थे । जिन्होंने चीन, जापान, आर्बस्थान, तुर्कीस्तान, यूनान, मिश्र, मांगलिया और अमेरिका तक जैन-धर्म का प्रचार किया था । आज वहां जैन-धर्म का अस्तित्व नहीं है तथापि वहां जैनधर्म के ध्वंस विशेष खंडहर प्रचूरता से पाये जाते हैं । पाश्चात्य विद्वानों की शोध एवं खोज ने यह साबित कर दिया है कि किसी समय यहां जैनों की प्रबल्यता थी जिसका इतिहास हम पहिले भाग में लिख आए हैं ।

(२२) कलिङ्ग पति महा मेघवानचक्रवर्तो
महाराजा खारवेल—जैन राजा

इनके पूर्वज महाराजा शोभनराय से खारवेल तक जितने राजे हुए वे सब जैन धर्म के परम उपासक थे । खारवेल का इतिहास हम स्वतंत्र आगे के भाग में लिखेंगे ।

(२३) विजयापुर पट्टन का राजा विजयसेन
जैन राजा

राजा विजयसेन महाराजा उत्पलदेव के खानदान में हुआ है इसने विजय पट्टन बसा के वहां का शासन किया । आचार्य

कक्कसूरि के परमोपासक एवं भक्त था इसने श्रीऋषभदेव का एक विशाल मन्दिर बनवाया, और तीर्थ यात्रा निमित विराट् संघ निकाल के महान् पुन्यापार्जन किया था। इनका सत्ता समय वी० नि सं० ३५८ का है।

"उपकेश गच्छ पट्टावलि"

(२४) संखपुर नगर का राजा संखपाल जैन राजा

यह नृपति भी महाराजा उत्पलदेव के घराने में बड़ा ही पराकर्मी और वीर हुआ जिसने संखपुर नाम का नगर बसा कर वहां का शासन किया। विदेशियों के साथ बड़ी वीरता से युद्ध कर देश व धर्म का रक्षण किया। आपके पुत्र देवार्जुन ने आचार्य कक्कसूरि के पास १६ वर्ष की उमर में भगवती जैन दीक्षा को ग्रहण की। आप जैन धर्म के कट्टर प्रचारक थे और लाखों अजैनों को जैन बना के जहां तहां जैन धर्म की खूब प्रभावना की। आपकी कई पिढ़ियों के राजाओं ने जैनधर्म पालन करते हुए बड़ी योग्यता से राजतंत्र चलाया। इनका सत्ता समय वी० नि० सं० ३६० का है।

"उपकेश गच्छ पट्टावलि"

(२५) मंडोवर का राजा महाबली—जैनराजा

महाराजा महाबली एक समय शिकार खेलने को जा रहे थे उस समय आचार्य देवगुप्तसूरि पद भ्रमन करते जंगल में आ निकले और वनचर जीवों पर तथा राजा पर कारुणाभाव लाकर राजादि को धर्मोपदेश दिया। फल स्वरूप में उन्हों पर "अहिंसा परमोधर्म" का इतना प्रभाव पड़ा कि मांस मदिरा का त्याग कर

जैन धर्म को स्वीकार कर लिया। नृपति ने अपने नगर में जैन मन्दिर बनाया और आचार्यश्री के कर कमलों से प्रतिष्ठा करवाई। जैन धर्म का प्रचार और स्वधर्मी भाईयों की वात्सल्यता में इस नृपति ने अच्छा नाम कमाया। वंशावली में इनका विस्तार से वर्णन किया है वह उपकेश गच्छ पट्टावलि में दिया जायगा। इनका सत्ता समय वी० नि० सं० ४०९ का है।

"वंशावलियों"

(२६) उज्जैन का महाराजा विदर्थ—जैनराजा

यह नृपति सम्राट् सम्प्रति का पुत्र और उसके उत्तराधिकारी था जिसने अपने पिता को मुवाफिक जैन धर्म का पोषण और प्रचार किया। इलका सत्ता समय वीर निर्वाण चौथी शताब्दि।

"महान् सम्प्रति नामक ग्रन्थ"

[२७] उज्जैन नगरी का राजा बलमित्र और २८ भानूमित्र—जैनराजा

यह युगल नृपति भरुच्छ नगर के राजा थे पर जब गर्दभिल्ल का राज शकों ने छीन कर उज्जैन की गद्दी पर चार वर्ष राज किया था। बाद शकों से उज्जैन का राज बलमित्र भानूमित्र ने छीन लिया और वहां का राज किया यह नृपति भी कालकाचार्य के परमोपासक और जैनधर्म के कट्टर प्रचारक थे। इनका समय विक्रम की पहली शताब्दि है

"प्रभाविक चारित्र"

(२९) उज्जैन नगरी का महाराजा नभसेन जैन राजा

बलमित्र भानूमित्र राजा ने उज्जैन में ८ वर्ष राज किया उनके बाद वहां का शासन महाराजा नभसेन ने किया इनका समय वीर निर्वाण चतुर्थी शताब्दि है।

"महान सम्प्रति"

(३०) धारावास नगर का राजावीरसिंह—जैनराजा

महाराजा वीरसिंह जैनधर्मोपासक एक वीर राजा था। आपके कालक नामक पुत्र और सरस्वती नाम पुत्री थी उन्होंने आचार्य गुणाकारसूरि के पास परम वैराग से जैन दीक्षा ली थी। कालक मुनि सूरि पद के योग्य सर्व गुण सम्पन्न होने पर गुणाकार सूरि ने आचार्य पदवी देकर उसको कालकाचार्य बनाया। कालकाचार्य जैसे क्षत्रीवंश में वीर थे वैसे ही धर्मवीर भी थे आप अपने सद्‌गुणों से सर्वत्र प्रसिद्ध भी थे।

साध्वी सरस्वती महान् रूपवती होने के कारण उज्जैन का राजा गर्दभिल्ल ने बदनीति और बलजबरी से उसे अन्तेवर गृह में रखली। यह बात कालकाचार्य को खबर होने पर उनको बड़ा भारी दुःख हुआ। वे राजा के पास जा कर बहुत समझाया पर कामान्ध राजा ने एक भी नहीं मानी। दूसरा उपाय न होने से कालकाचार्य ने इरान के ९६ मंडलीक राजाओं को बुलवाये और उज्जैन का भंग करवा के राजा गर्द भिल्ल को उनके पाप की पूरी सजा दीलाई अर्थात् गर्दभिल्ल को पद भ्रष्ट करवा के साध्वी सरस्वती को मुक्त करवा के पुनः दीक्षा दी इस प्रकार

कालकाचार्य ने शासन व धर्म की रक्षा की। इनका समय विक्रम की प्रथम शताब्दि है।

"निशीथचूर्णी व प्रभाविक चारित्र"

(३१) भरुच्छ नगर का राजा बलमित्र भानु मित्र जैन राजा

भरुच्छ नगर का राजवंश प्राचीन काल से ही जैनधर्म के उपासक और प्रचारक थे पर बलमित्र भानूमित्र का नाम विशेष मशहूर है। इन दोनों नृपतियों ने थोड़े वक्त उज्जैन में भी राज्य किया था उनके धर्म गुरु कालकाचार्य थे।

"निशोथ चूर्णी व प्र० चारित्र"

(३२) प्रतिष्ठान नगर का राजा सतबाहन जैन राजा

राजा सतबाहन के आग्रह से कालकाचार्य ने पंचमी की संवत्सरी चतुर्थी को करी थी बात यह थी कि जब कालकाचार्य प्रतिष्टान नगर में पधार के चातुर्मास किया और राजा सतवाहनको उपदेश दे कर जैन बनाया और उसी वर्ष में संवत्सरीक व्रत और प्रतिक्रमण करने के लिए सूरिजो ने राजाको कहा उत्तर में राजा ने कहा कि पंचमी को तो यहाँ सार्वजनिक महोत्सव है और उसमें मुझे सामील रहना बहुत जरूरी है यदि आप संवत्सरी के लिये एक दिन आगे या पीछे अर्थात् चतुर्थी व षष्टी का दिन रखें तो मैं यह धर्म कृत्य सुविधा से कर सकता हूँ कालकाचार्य ने राजा को धर्म में स्थिर रखने को लक्ष में रख उनके आग्रह को मान देकर चतुर्थी को

संवत्सरी करना स्वीकार कर लिया। कालकाचार्य का संघमें इतना प्रभाव था कि उस नूतन प्रवृत्ति को प्रायः सब संघ मान रखी और आज पर्यन्त भी चतुर्थी की संवत्सरी होती आई है।

'प्रभाविक चारित्र"

(३३) उज्जैन नगरी का राजा विक्रमादित्य-जैनराजा

परम दयालु न्याय निपुण महाराजा विक्रमादित्य उज्जैन-नगरी में राज कर रहे थे। यह भी कहा जाता है कि राजा विक्रम ने सब जनता का ऋण (कर्ज) चुका के अपने नाम का संवत् चलाया वह आज पर्यन्त भी चल रहा है इसी कारण राजा विक्रम धर्मावतार के नाम से प्रसिद्ध हैं।

एक समय आचार्य सिद्धसेन दिवाकर भूभ्रमन करते हुए उज्जैन में पधारे। आप न्याय छंद एवं व्याकरण के धुरन्धर विद्वान् थे। कवित्य शक्ति तो आपकी इतनी चमत्कारोत्पादक थी कि जिसको श्रवण कर बृहस्पति भी चकरा जाता था। महाराजा विक्रम की राजसभा में आप अपनी विद्वता से राजा और पंडितों के मन को रंजन कर अच्छा सम्मान प्राप्त कर लिया था, विक्रम की राज्य सभा में आप एक प्रखर विद्वान् पण्डित समझे जाते थे।

एक समय राजाविक्रम, दिवाकरजी को साथ लेकर कुंडगेश्वर महादेव के मन्दिर में गये। राजा ने शिवलिंग को नमस्कार किया पर दिवाकरजी जैसे के वैसे ही खड़े रहे अर्थात् उन्होंने शिवलिंग को नमस्कार नहीं किया। राजा ने पुच्छा क्या आप शिवलिंग को नमस्कार नहीं करते हैं, दिवाकरजी ने कहा मेरे नमस्कार

को सहन करने वाले देव दूसरे ही हैं। यह देव मेरा नमस्कार को सहन नहीं कर सकता है। यह सुन राजा आश्चर्य में डूब गया और आग्रह पूर्वक बिनती की। इसलिये दिवाकरजी ने उसी समय कल्याणमंदिर स्तोत्र बना के भगवान् पार्श्वनाथ की स्तुति करना प्रारम्भ किया जिसका क्रमशः १३ वाँ पद्य पढ़ते ही धरणेन्द्र आकर हाजिर हुआ और लिंग काट कर उसके अन्दर से भगवान् पार्श्वनाथ† की मूर्ति प्रगट हुई। दिवाकरजी ने कहा मेरा नमस्कार सहन करने वाला यह देव है। राजा इस चमत्कार पूर्वक घटना को देख दिवाकरजी का पूर्ण भक्त बन गया अर्थात् जैन धर्म को स्वीकर कर उसका खूब ही प्रचार किया। चारित्रों से पाया जाता है कि राजा विक्रम ने उज्जैन से एक बड़ा भारी तीर्थयात्रार्थ शत्रुंजय गिरनारादि का संघ निकाला था।

"विक्रम चारित्र"

(३४) कुमार नगर का राजा देवपाल—जैनराजा

आचार्य सिद्धसेन दिवाकर एक समय भूभ्रमन करते पूर्व देश के कुमारपुर में पधारे। वहां का राजादेवपाल सूरिजी क अच्छा स्वागत किया। आचार्यश्री हमेशा राज सभा में जाा कर धर्मोपदेश दिया करते थे, जिसका प्रभाव राजा और प्रजा पर काफी पड़ा, राजादेवपाल दिवाकरजी का पूर्ण भक्त बन

† अवंती सुकमाल की माता ने इस मूर्ति को स्थापित की थी पर ब्राह्मणों के प्रबल्यता समय जैनमूर्ति पर लिंग स्थापन कर दिया फिर दिवाकरजी के प्रयत्न से लिंग फाट कर मूर्ति प्रगट हुई जिनको अवंती पार्श्वनाथ कहते हैं।

हमेशा धर्म चर्चा सुना करता था। राजा प्रजा की आग्रह पूर्वक बिनती को मान दे दिवाकर जी वहां ही ठहरे।

एक समय कामरू देश का राजा विजयवर्मा ने बड़ी सैना के साथ कुमारपुर पर आक्रमण किया, देवपाल के पास इतनी सैना नहीं थी कि विजयवर्मा का मुकावला कर सके। उसने दिवाकरजी से सब हाल निवेदन किया, दिवाकरजी अनेक लब्धि और विद्याओं से परिपूर्ण थे जिसका लाभ देवपाल राजा ने लिया कि उसने विजयवर्मा के साथ युद्ध कर उसे भगा दिया इस चमत्कार को देख राजादेवपालादि हजारों ने जैन धर्म स्वीकार कर उसका प्रचार किया। आचार्यश्री को दिवाकर की पद्वी इसी नृपति ने दी इनका समय विक्रम के समय का लीन माना जाता है।

"प्रभाविक चारित्र"

(३५) पाटलिपुर का राजा मुरूण्ड-जैन राजा

आचार्य पादलिप्तसूरि एक समय भूभ्रमन करते पाटलीपुर पधारे। वहां का मुरूण्ड राजा ने आचार्यश्री का अच्छा आदर सत्कार किया, आचार्यश्री ने भी राजादि को धर्म देशना देकर उन पर जैनधर्म का प्रभाव डाला। एक समय राजा के शिर की असाध्य बेदना हुई, राजमंत्रियों द्वारा सूरिजी को ज्ञात हुआ तब एक तर्जनी अंगुली से राजा की वेदना मिटा दी। राजा आचार्य देव के स्थान पर जाकर भक्ति पूर्वक वन्दन करी बाद कई शंकाओं का निराधार कर राजा जैन धर्म को स्वीकार किया और राजा ने सूरिजी के अध्यक्षत्व में तीर्थ यात्रा निमित्त शत्रुं-

जयादि का संघ निकाल कर जीवन सफल किया। इनका समय विक्रम की दूसरी शताब्दी है।

"प्रभाविक चारित्र"

(३६) विलासपुर नगर का राजा प्रजापति-जैनराजा

.........राजा प्रजापति आचार्य श्रमणसिंह का परम भक्त था। इनका समय पादलिप्त सूरि के समकालीन है।

"प्रभाविक चरित्र"

(३७) मानखेट का राजा कृष्णराज-जैनराजा

महाराजा कृष्णराज आचार्य पादलिप्त सूरि का परम भक्त था। शत्रुंजय की यात्रा में यह राजा आचार्य श्री की सेवा में था।

"प्रभाविक चारित्र"

(३८) गुड़ शस्त्रपुर का नृपति-जैन राजा

आचार्य खपटसूरि एक समय श्री संघ की आग्रह पूर्वक विनती से गुड़शस्त्रपुर में पधारे। वहां पर एक व्यन्तर नगर में उपद्रव कर रहा था। सूरिजी ने उसे मंत्र के जरिये वस में कर संघ उपद्रव मिटा के शान्ति स्थापन करी। वहां के नृपति को भी प्रतिबोध कर जैनधर्मोपासक बनाया। इनका समय विक्रम की दूसरी शताब्दी का माना जाता है।

"प्रभाविक चरित्र"

(३९) पाटलीपुर का दाहड़राज-जैन राजा

पाटलीपुर में मिथ्यादृष्टि दहाड़ नामक राजा राज करता

था उसने सर्व दर्शनकारों का अपना २ आचार व्यवहार छोड़ाने का आज्ञा दी तथा जैनसाधु ब्राह्मणों को प्रणाम करे ऐसी आज्ञा निकाली। इससे जैन श्रमण संघ में बड़ी भारी चिन्ता पैदा हुई। उस समय दो साधुओं को भरूच्छ नगर भेजकर श्रीमान् महेन्द्रोपाध्याय को बुलाया और सर्व ब्राह्मणों को राज सभा में एकत्र किया कि आपको जैन साधु नमस्कार करेंगे। उपाध्यायजी ने एक कनेर की कंभा लेकर ब्राह्मणों पर फेरदी कि वे सब निचेस्ट हो गये। यह देख राजा और प्रजा उपाध्यायजी के चरणों में शिर झुकाया। और प्रार्थना की कि आप दयालु हो इन ब्राह्मणों को सावचेत करें। उपाध्याय जी ने शर्त की कि यदि यह ब्राह्मण जैन दीक्षा ले तो सचेतन हो सकते हैं। राजा प्रजा ने इस बात को स्वीकार करी तब उपाध्यायजी ने पुनः कनेर की कंभा फेरी कि वे सब सावचेत हो आये। फिर वे सब ब्राह्मण भरूच्छ जाकर आचार्य खपटसूरि के पास जैन दीक्षा ग्रहन करी। राजा भी जैन धर्मोपासक हुआ।

"प्रभाविक चरित्र

(४०) वल्लभिनगरी का राजा शल्यादित्य—जैन राजा

आचार्य सिद्धसूरि पृथ्वी मंडल को पावन करते हुए वल्लभिनगरी में पधारे। वहाँ का राजा शल्यादित्य ने आपका बड़ा ही स्वागत किया। आचार्यश्री ने राजा व प्रजा को धर्मोपदेश सुनाया। राजा ने जैन धर्म को स्वीकार कर आचार्य देव का व जिनशासन का इतना भक्त वन गया कि प्रतिवर्ष सास्वती अठा-

ईयों के समय श्री सिद्धगिरी जाकर आठ आठ दिन वहाँ मोहत्सव पूर्वक भक्ति करता था। आचार्य श्री के उपदेश से शल्यादित्य राजा ने तीर्थाधिराज शत्रुंज्य का उद्धार भी करा पाया था।
❀ इनका समय वी० नि० पांचवी शताब्दी का है।

(४१) सोपारक पट्टन का राजा जयकेतु—जैन राजा

आचार्य देवगुप्तसूरि एक समय सोपारक पट्टन पधारें। वहाँ एक यक्ष का बड़ा भारी उपद्रव था। राजा जयकेतु और नागरिक लोग आचार्यश्री से अपनी दुःख की गाथा कही और उपद्रव शान्ति की अर्ज करी। दयानिधी आचार्यदेव ने अपने आत्मबल और मंत्र शक्ति से यक्ष को बस कर नगर में शान्ति वरताई। चमत्कार को नमस्कार ? राजा और प्रजा सूरिजी के परमो पासक बन गये। वहाँ पर श्री महावीर भगवान् का नया मन्दिर बनवा के सूरिश्वरजो के कर कमलों से उसकी प्रतिष्टा करवाई—इत्यादि।❀ इनका समय वी० नि० छठी शताब्दी का है

"उपकेश गच्छ पट्टावलि"

❀ तेषां श्री कक्क सूरीणं शिष्याः श्री सिद्ध सूरयः।
वल्लभी नगरे जग्मर्विहरंतो मही तले ॥ ७३ ॥
नृपस्तत्र शिलादित्यः सूरिभिः प्रति बोधितः।
श्री शत्रुंजय तीर्थेश उद्धारान् बिदंध बहून ॥ ७४ ॥
प्रति वर्ष पर्यूषणेस चतुर्मासीकः त्रये।
श्री शत्रुंजय तीर्थे गत यात्राये नृपरूतम ॥ ७५ ॥
(वि० सं० १३९३ लिखे उपकेश गच्छं चारित्र से)

(४२) कोलापुर पट्टन का राजा कदर्पि-जैनराजा

आचार्यश्री कक्कसूरिजी एक समय कोलापुर पट्टन पधारे। आप स्वपर मत के शास्त्रों में प्रवीण और अनेक अलौकिक विद्याओं से भूषित थे। वहाँ पर एक योगी आया था और वह हरएक के साथ वाद विवाद कर विजय पाता था। इस समय आचार्य श्री के साथ भी वह विद्या वाद करने की उत्कण्ठा रखता था और इन दोनों का वाद राज सभा में हुआ, आखिर में विजय आचार्य देव को मिली। इस हालत में राजा और बहुत नागरिक जैन धर्म स्वीकार कर आचार्यश्री के परमोपासक बन गये।

"उपकेश-पट्टावली"

(४३) आनंदपुर का ध्रूवसेन राजा—जैन राजा

राजा ध्रूवसेन आचार्यश्री कालकसूरि का परमोपासक था। इसी राजा के कारण कल्प सूत्र चतुर्विध श्रीसंघ की सभा में वांचना शुरू हुआ जो कि पहले केवल साधु ही वाचते थे।

"कल्पसूत्र"

(४४) जाबलीपुर का राजा धवल-जैन राजा

आचार्य नन्नप्रभसूरि ने महाराजा धवल को उपदेश देकर जैन बनाया जिसने श्री शत्रुंजय का बड़ा भारी संघ निकाल भगवान महावीर का मन्दिर बनवा के सवा मण सोना का झंडा चढ़ाया था एवं जैन धर्म की खूब प्रभावना की।

"कोरंटा गच्छीय श्री पूज्य की बही"

(४५) कन्याकुब्जदेश का राजा चित्रगेंद— जैन राजा

आचार्य देवगुप्त सूरि बिहार करते एक समय कन्याकुब्जदेश में पधारे, वहाँ का राजा चित्रगेंद ने आचार्यश्री का अच्छा स्वागत् किया। और आचार्यश्री की विद्वता देख बहुत प्रसन्न हुवा हमेशा राज सभा में बुला के जैनधर्म के तत्वों को श्रद्धा पूर्वक सुनता रहा। राजा की अभिरुचि जैनधर्म की ओर झूकने लगी आचार्यदेव ने उसे जैनधर्म की शिक्षा दीक्षा दी। राजा ने आत्म कल्यानार्थ भगवान महावीर का मन्दिर बनवा के उसमें सुवर्ण की विशाल मूर्ति स्थापन कर आचार्य देवगुप्त सूरि से प्रतिष्ठा करवाई *

"उपकेश गच्छ चारित्र"

(४६) भिन्नमाल का हुन्नवंशी तोरमिण राजा

आचार्य हरिगुप्तसूरि ने हुन्नवंशी नृपति तोरमिण को उपदेश देकर जैनधर्म का अनुरागी बनाया और उसने भिन्नमालनगर में

---

* तदत्वयं देवगुप्ताचार्यं यैः प्रतिबोधितः ।
श्री कन्य कुब्ज देशस्य स्वामि चित्रागंदा भिधः ।
स्व राजधानी नगरे स्वर्ण बिम्ब समन्वितं ।
यो कारय जिनगृह देवगुप्तप्रतिष्ठितं ।
—(उ. चा. श्लोक ८५, ८६

भगवान ऋषभदेव का एक मन्दिर बनवा के पून्योपार्जन किया।
"कवलयमाल कथा"

(४७) वेलापुर पट्टन का राजा अरिमर्दन–जैनराजा

श्रीमान् लोहिन्याचार्य ने वेलापुर पट्टन पधार कर राजा अरिमर्दन को प्रतिबोध देकर जैन बनाया।

"पट्टावलि"

(४८) बनारस का राजा हर्षदेव—जैनराजा

आचार्य मानतुंगसूरि भ्रमण करते एक बख़्त बनारस पधारे वहाँ वेदान्तियों का बड़ा जोर था और वे लोग भिन्न २ चमत्कारों द्वारा राजा और नागरिकों को अपने बस में कर रखे थे। राजा को यह समझा दिया कि इस समय हमारे सिवाय किसी दर्शन में चमत्कार नहीं है। मानतुंगसूरि भी अलौकिक चमत्कारी थे। जैन संघ ने राजा से अर्ज करी कि एक जैनाचार्य यहाँ पर आए हैं और वह बड़े ही चमत्कारी हैं। राजा ने सूरिजी को राजसभा में बुलाया और उनकी परीक्षा के लिए उनके हाथों पैरों में कड़ियें डाल के एक गर्भ कोटड़ी में बन्ध कर ४४ ताले लगा दिये। मानतुंग सूरि ने उस बन्दी खाने में रहकर भक्तामर नामक स्तोत्र द्वारा भगवान् ऋषभदेव की स्तुति करी—ज्यों-त्यों स्तोत्र के एकेक श्लोक पढ़ते गये त्यों-त्यों एकेक ताला तुटता गया आखिर उनके हाथों पैरों की बेड़ियें तुट गई और राज सभा में आ पहुँचे। यह चमत्कार देख राजा प्रजा को बड़ा ही आश्चर्य हुआ। तत्पश्चात् आचार्य श्री जैन धर्म के तत्व ज्ञान का उपदेश दिया। राजादिक ने जैन धर्म को स्वीकार करके श्रद्धा पूर्वक पालन करने लगे।

"प्रभाविक चारित्र"

(४६) मरुकोटनगर का महाराजा काकू—जैनराजा

आचार्य श्री कक्कसूरि एक समय विहार करते हुए मरूकोट नगर में पदार्पण किया। उस नगर का महान् बली काकू नामक राजा अपने पुराने किल्ले का जीर्णोद्धार करवा रहा था खोद काम करते हुए को भूमि से भगवान् नेमिनाथ की एक विशाल मूर्ति निकल आई। मूर्ति मनोहर एवं चमत्कारी थी, जब इस बात का पता आचार्य देव को मिला तो आप श्रावक वर्ग के साथ दर्शनार्थ किल्ला में पधारे। उस अवसर पर राजा ने प्रश्न किया कि हे पूज्यवर! यह निमित्त मेरे लिये कैसा है? आचार्यदेव ने फरमाया कि इससे अधिक शौभाग्य क्या हो सकता है कि जिनके वहाँ साक्षात् परमेश्वर का प्रतिबिम्ब प्रगट हुआ हो। यह सुन कर राजा बहुत प्रसन्न हुआ। श्रावक लोग राजा से मूर्ति की याचना की कि हम लोग इस मूर्ति के लिये नया मन्दिर बनाके प्रतिष्ठा करावेंगे। राजा इन्कार कर दिया और जिन भक्ति में अनुराग रखता हुआ अपने ही द्रव्य से किल्ला में विशाल जिनालय बनवाया और आचार्यकक्कसूरि के कर कमलों से बड़े ही समारोह से प्रतिष्ठा करवाई। राजा अहिंसा परमो धर्म का पक्का अनुयायी बनके जैन धर्म का प्रचार करने में सफलता प्राप्त करी आचार्य कक्कसूरि के उपदेश से राजा के साथ वहाँ के ४००० घरों वालों ने भी जैन धर्म स्वीकार कर रुचि के साथ उसका पालन किया। *

---

* अथ श्री विक्रमादित्यात् पञ्चवर्ष शतैर्यतैः।
साधिकैः श्री कक्कसूरि गुरु रासी दूगुणोत्तर॥

(५०) राणकदुर्ग का राजा शूरदेव—जैनराजा

आचार्य कक्कसूरि भूभ्रमन करते हुए राणकदुर्ग पधारे। राजा प्रजा ने आपका अच्छा स्वागत किया सूरीश्वरजी का हमेशा उपदेश राजसभा में होता रहा, जिसका प्रभाव राजा पर इस प्रकार हुआ कि जिसने मांस मदिरादि दुर्व्यसनों का त्याग कर कई नागरिकों के साथ जैन धर्म स्वीकार किया इतना हो नहीं पर अपने नगर में भगवान् शान्तिनाथ का एक विशाल जैन मन्दिर बनवा के उसकी प्रतिष्ठा आचार्य कक्कसूरि से करवाई। धन्य है ऐसे धर्म प्रचारक आचार्य देवों को। *

तदा श्री मरुकोटस्य, वीक्ष्यवप्रं पुरातनं।
दृढं पृथुं कर्तुममा जोइया त्वय संभवः॥
काकुनामा मंडलिको, बलवान् बल वृद्धये।
शुभेलग्ने शुद्ध भूमौ, गर्तापुमखानयत्॥
खन्यमाना ततो कस्मान्निस्ससार जिने शितुः।
बिम्ब श्री नेमिनाथस्य, वीक्षीतंमुमुदे नृपः॥
नूतनं परिकरं च, कारया मासिवा नृपः।
श्री कक्कसूरिनभ्यर्थ्य प्रतिष्टां च व्यधापयत्॥

"उपकेश गच्छ चरित्र श्लोक"

* सूरि राणकदुर्गे गाद्विहरन्नथ तत्प्रभुः।
भुट्टास्वये सूरदेवो यति तं नं तुम स्वहं॥
प्रबुधोय स्वीयपुरे श्री शान्तिनाथ जिन मन्दिरे।
कारया मास भूपाल, प्रतिष्टांविदधे गुरुः॥

उपकेश गच्छ च० श्लोक ६१-६२

(५१) त्रिभुवन नगर का राजा ......जैन राजा

आचार्य कक्कसूरि के अनेक शिष्यों में मुनि शान्तिचन्द्र भी एक था एक समय आचार्य देव शान्तिचन्द्र से धर्म गोष्टी करते हुए कहा क्या शान्ति तुम भी किसी राजा को प्रतिबोध दे कर जैन मन्दिर बनावेंगा ? मुनि शान्तिचन्द्र ने इसे ताना समझ कर कहा हाँ प्रभु आपकी कृपा हो तो यह कार्य कठिन नहीं है पर मन्दिर की प्रतिष्ठा के लिये आपको पधारना होगा ? मुनि शान्तिचन्द्र कई मुनियों को साथ ले सूरिजी की आज्ञा लेकर विहार कर क्रमशः त्रिभुवन नगर में आये वहाँ के राजा को प्रतिबोध कर जैन धर्म की शिक्षा दीक्षा दे उनसे एक विशाल जैन मन्दिर बनवाया जब मन्दिर तैयार हो आया तो राजा के कर्मचारियों द्वारा आचार्य को आमन्त्रण पूर्वक बुलवा के उस मंदिर को प्रतिष्ठा करवाई। धन्य है ऐसे गुरु शिष्यों को कि उनके ताना माना में भी धर्म प्रचार की धगाश भरी हुई थी।*

(५२) सिन्ध देश का राव गोशल—जैनराजा

आचार्य देवगुप्त सूरि धर्म प्रचार करते हुए एक समय सिन्ध प्रान्त में पधारे वहाँ का राव गोशल (भाटी) मिथ्यात्ववासित शिकार को जा रहा था आचार्य देवने उसको प्रतिबोध देकर जैन धर्मोपासक बनाया "कर्मशूरा सो धर्मशूरा" इस युक्ति अनुसार उसने जैन धर्म का खूब प्रचार किया लुनाशाह जैसे दानी मानी

---

* प्रतिष्ठा येति सोगच्छत दुर्गे त्रिभुवनादि के।
गिरौ भूपं प्रतिबोध्या, कारय जिन मन्दिरम् ॥
"उपकेशगच्छ च० श्लोक ६६

इसी घराना में हुए जिनकी संतान आज लुनावतों के नाम से मशहूर है ।

"उपकेश गच्छ पट्टावलि"

(५३) सक्खपुर नगर का राजा विजयवन्त जैनराजा

आचार्य सर्वदेवसूरि एक समय विहार करते हुए संक्खपुर नगर में पधारे । राजा एवं प्रजा ने आपका सुन्दर स्वागत किया, आचार्यदेव ने राजा प्रजा को जैन धर्म की प्राचीनता एवं प्रमाणिकता का खूब ही उपदेश दिया जिसका प्रभाव राजा प्रजा पर इस कदर हुआ कि उन्होंने मिथ्यात्व का त्याग कर जैन धर्म को स्वीकार कर श्रद्धा पूर्वक पालन कर स्वपर का कल्याण किया ।

"जैन गौत्र संग्रह नामक"

(५४) भिन्नमल का राजा भान—जैन राजा

आचार्य उदयप्रभसूरि एक समय भिन्नमाल नगर में पदार्पण किया, वहाँ का राजा भाण, आचार्य श्री का उपदेश हमेशा रुची पूर्वक श्रवण किया करते थे कई प्रकार की तर्क वितर्क के पश्चात राजा ने जैनधर्म को स्वीकार कर उसका पालन और प्रचार किया इसका समय विक्रमी की आठवी शताब्दी का है इस नृपति ने उपकेशपुर के रत्नाशाह श्रेष्टि की पुत्री के साथ विवाह किया था, राजा भाण ने भिन्नमाल नगर से एक विराट् संघ शत्रुँजयादि तीर्थों की यात्रार्थ निकाला था जिसमें प्रचूरता से द्रव्य व्यय कर पुन्योपार्जन किया, जिस गच्छ के प्रतिबोधित श्रावकों की वंशावलिये उसी गच्छ वाले लिखे ऐसा प्रबन्ध भी इसी भूपति के शासन काल में हुआ इत्यादि ।

"जैन गौत्र संग्रह"

(५५) गौपगिरि (ग्वालियर) का राजा आम जैनराजा

बांदीकुंजर केसरी आचार्य बप्पभट्टसूरी जैन जैनेतर जनता में बड़े ही मशहूर है आप प्रत्येक विषय का साहित्य के धुरंधर विद्वान थे। आपने काव्य और कवित्व शक्ति से राजा आमको जैन बनाया। नृपति आमने ग्वालयेर में भगवान आदीश्वर का १०१ हाथ उच्चा मन्दिर बनवा के उसमें १८ भार सुवर्ण की मूर्ति स्थापन की जिसकी प्रतिष्टा आचार्य बप्पभट्ट सूरि के कर कमलों से करवाई। आचार्य श्री की अध्यत्तत्व में इस भूपति ने शत्रुंजय गिरनारादि तीर्थों की यात्रा निमित एक बड़ा भारी संघ निकाला था राजा आमकी सन्तान ओसवाल जाति में राजकोठारी के नाम से प्रसिद्ध हैं तीर्थेश श्री शत्रुजय का अन्तिमोद्धारक श्रीमान् कर्माशाह जैसे धर्मवीर राजा आम के घराने में पैदा हुए थे।

"प्रभाविक चारित्र"

(५६) मथुरानारी का राजा वाक्पति—जैनराजा

नृपति वाक्पति आचार्य बप्पभट्टसूरि का परम भक्त था जिसने श्री पार्श्वनाथ चैत्य में आचार्यश्री के हाथों से जैन दीक्षा लेकर १८ दिन का अनसन व्रत पूर्वक स्वर्गवास किया था।

"प्रभाविक चरित्र"

(५७) गौड-देश लखणावती का राजा धर्मशील—जैनराजा

आचार्य बप्पभट्ट सूरि कनौज से विहार कर गौडदेश की राजधानी लखणावती पधारे वहाँ का राजा धर्मशील ने आचार्य

देव का अच्छा स्वागत किया, राजा बोद्धमत अवलम्बी होने पर भी आचार्यश्री को आग्रह पूर्वक विर्नति कर आपने राजसभा में हमेंशा व्याख्यान श्रवण किया करते थे, बोधभिक्षु वर्द्धन कुंजर के साथ एक दफे आचार्य बप्पभट्ट सूरि का शास्त्रार्थ हुआ जिसमें विजय आचार्य बप्पभट्ट सूरि की हुई इतना ही नहीं पर राजा धर्मशील जैन धर्म को स्वीकार किया और वर्द्धनकुञ्जर भी जैन धर्म को अपने हृदय में उच्च स्थान दिया।

"प्रभाविक चारित्र"

(५८) पाटण का राजा बनराज चावड़ा-जैनराजा

यों तो चावड़ा बंशी राजा जैन धर्म के परम उपासक ही थे, इनकी राजधानी पंचासरामें थी पर वि० सं० ८०२ में बनराज ने अनहलवाड़ पाट्टणनामक नया नगर बसा कर अपनी राजधानी कायम की। इनके गुरु आचार्य शीलगुणसूरि थे आचार्य श्री की इसपर पूर्ण कृपा थी जिससे आपने सब तरह की योग्यता प्राप्त की राजा बनराज ने पाट्टण में पंचासरापार्श्वनाथ का मन्दिर बनाया था और जैनधर्म का प्रचार कार्य में बड़ा ही सहयोग दिया था स्वाधर्मी भाइयों की सहायता की और इनका अच्छा लक्ष था इत्यादि

"पाटण का इतिहास"

(५९) मानखेट नगर का राजा अमोघवर्ष–जैनराजा

महाराष्ट्रीय प्रान्त में यों तो विक्रम पूर्व आठवी शताब्दी में जैनाचार्य लोहित सूरि के उद्योग से जैन धर्म का प्रचूरता से

प्रचार हुआ था आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने इस प्रान्त में विहार कर जैन धर्म का प्रचार किया था विक्रम की पाँचवी शताब्दी से दशवी शताब्दी तक इस प्रान्त में जैन धर्म राष्ट्रीय धर्म माना जा रहा था बाद में भी पाण्ड्यवंश पल्लववंश कदम्बवंशी कल चूरीवंश के नृपति जैनधर्मोपासक ही नहीं पर जैन धर्म प्रचारक थे, विक्रम की नौवीं शताब्दी में राष्ट्रकुट वंशी महाराज अमोघवर्ष जैन धर्म का कट्टर प्रचारक हुआ था। जिनके धर्मगुरु दिगम्बर आचार्य जिनसेन थे इस राजा ने अनेक जैन मन्दिर और जैनश्रामणों के लिये गुफाए बनवाई थी। जिनके शिलालेख ताम्रपत्र दानपत्रादि बहुत से उपलब्ध है।

"प्राचीन जैन स्मरक"

(६०) नाणकपुर का राजा शत्रुशल्य—जैनराजा

आचार्य परमानन्दसूरि ने नाणकपुर में पधार कर राजा शत्रुशल्य को जैन धर्म की शिक्षा दीक्षा देकर जैन धर्मोपासक बनाया। इस नृपतिने जैन धर्म की खूब ही प्रभावना की जैन मन्दिर बनवा के पुन्योपार्जन किया।

"जैन गौत्र संग्रह"

(६१) कालेर नगर के राव राखेचा—जैन राजा

आचार्य देवगुप्तसूरि भू भ्रमण करते हुए एक बार कालेर नगर में पधारे वहाँ पर जीव हिंसा की घोर अधर्म प्रवृति चल रही थी। आचार्य श्री अनेक कठिनाइयों का सामना कर वह

ठेरे और राजा प्रजा को अनेक प्रकार के उपायों से प्रतिबोध कर जैन बनाये और उन्होंने अनेक धर्म कार्य कर पूर्व सेविन पाप को धो डाले इत्यादि।

"उपकेश गच्छ पदावलि"

(६२) किराटकुंप नगर का राजा जैत्रसिंह–जैनराजा

श्रेष्ठी वर्य्य बेसट किसी कारण वसात् उपकेशपुर से अपने कुटम्ब और धनमाल लेकर रवाने हो गये, रास्ता में जब किराट-कुंप नगर आया तो आप बहुमूल्य भटेणो ले राजा जैत्रसिंह के पास गया उस समय उस नगर में अट्टाईमहोत्सव प्रारंभ होने के कारण महाजन लोग राजा से अर्ज करने को आये थे कि आट्ठ दिन अमारी पहडा की घोषणा होनी चाहिये ? राजा ने कहा कि तुमारे महाजनों का यह क्या धर्म है कि हरेक कार्य में जीव हिन्सा बन्ध कराने की कौशिश की जा रही है। इस पर श्रेष्ठी बेसट ने कहा कि यह धर्म केवल महाजनों का ही नहीं पर खास कर क्षत्रियों का ही है सदुपदेश के अभाव क्षत्रि लोग जीव हिन्सा करने लगे तब महाजनों को हिंसा बन्ध की कौशीश करनी पड़ती है। तीर्थंकर और अवतारी पुरुष अहिंसा का ही उपदेश दिया इत्यादि उपदेश से राजा को अहिंसा धर्म का उपासक बनाया।

"नाभिनन्दोद्धार ग्रन्थ"

(६३) कनौज का राजा भोज—जैन राजा

ग्वालियर का महाराजा आम का पुत्र दुंदक और दुंदक का पुत्र भोज था और यह नृपति कनौज का शासन कर्त्ता थे। आचार्य श्रीगोविन्दसूरि ने इसको प्रतिबोध देकर जैन धर्म का

उपासक वनाया। इस भूपति ने जैन धर्म का खूब प्रचार किया धर्म कार्यों में पुष्कल द्रव्य खर्च किया।

"प्रभाविक चरित्र"

(६४) मंडोर का महाराजा कक्कुक—जैन राजा

प्रतिहार बंशी राजा कक्कुक का एक शिला लेख ग्राम घटियाल से मिला है जिसकी भाषा-प्राकृत है पुरातत्त्व वेता पं० रामकरणजी ने अनुवादकर स्पष्ट शब्दों में कहा है कि मारवाड़ में यह लेख सबसे प्राचीन है यह नृपति जैन धर्मोपासक था और इसने एक जिन मन्दिर बनवा के धनेश्वर गच्छ वालो को अर्पण किया था ऐसा शिला लेख में उल्लेख किया है शिला लेख का समय वि० सं० ९१८ चेत्र शुक्ल द्वितीया का है।

"वरिस सरासु अ नवसुं। अट्टारस मग्ग लेसु चेताम्मि।
णक्खत्ते वहुहत्थे बुहवार धवल बी आए (१९)"

× × × ×

"तेस सिरि कक्कुएणं, जिणस्स देवस्स दुरिअणिद्धलणं।
करा वि अं अचल मिमं, भवण भत्तीए सुह जणयं (२२)"

× × × +

"अप्पि अमेअं भवणसिद्धस्स धणेसर गच्छमि"

इस शिला लेख के अवतर्णों से स्पष्ट होता है कि महाराज कक्कुक जैन राजा था और जिन मन्दिर बनवा के धनेश्वर गच्छ वालों को अर्पण किया था।

"राजपूताना के जैन वीर से"

(६५) हस्तीकुँडी नगरी का राजा विदग्धराज—जैन राजा

गोडवाड प्रान्त का विजापुर ग्राम से एक शिलालेख मिला है जिसमें लिखा है कि हस्तीकुंडी नगरी का राष्टकुंट राजा विदग्धराज ने जैनाचार्य वासुदेव सूरि के उपदेश से जिनेश्वर का मन्दिर बनवाके उनके निर्वाहार्थ कई प्रकार की लागें लगवा के आमन्द का मार्ग सरल बनाया इसका समय शिला लेख में वि० सं० ९७३ का बतलाया है।

"प्राचीन लेख संग्रह भाग दूसरा"

(६६) हस्तीकुंडी नगरी का राजा धवल—जैनराजा

महाराजा विदग्धराजा का पुत्र मम्भट हुआ उसने जैन मंदिर की लागन का समर्थन किया। मम्मट का पुत्र राजा धवल हुआ इसने अपने पितामह के बनाया हुआ जिनमन्दिर का जीर्णोद्धार करवाके उसके अन्दर भगवान् ऋषभदेव की मूर्ति स्थापन कर पुनः प्रतिष्ठा करवाई। नया मन्दिरजी की आमन्द में और भी वृद्धि करवाई इसका समय वि० सं० १०५३ का उस समय के शिला लेख से विदित होता है। राजा विदग्धराज, मम्मट और धवल एवं तीनों नृपतियों ने जैन धर्म की खूब प्रभावन्न की हथुडी नगरी में जैनाचार्यों ने अनेक राजपुतों को प्रतिबोध देकर जैन बनाये आज भी वाली सादड़ी शिवगंजादि ग्रामों में हथुडी राठौड़ (ओसवालों में एक जाति) की बहुत बस्ती हैं।

"प्राचीन शिला लेख संग्रह भाग दूसरा"

(क) महाराष्ट्र प्रान्त में सरकारी पुरातत्त्व विभाग की सोध एवं खोज से ऐतिहासिक सामग्री-शिलालेख, ताम्रपत्र, दानपत्र, गुफालेख, मन्दिर मूर्तियों के लेख, और प्राचीन स्मरकों से मालुम होता है कि विक्रम की पाचवी शताब्दी से दशवी शताब्दी तक इस प्रान्त में जैन नृपतियों ने जैनधर्म का जोरों से प्रचार कर जैनधर्म को राष्ट्रीय धर्म बना के उन्नति के उच्चे सिक्खर पर पहुँचा दिया था जिसका सम्पूर्ण इतिहास तो एक स्वतन्त्र वृहत् ग्रन्थ में लिखा जायगा यहाँ केवल नामोल्लेख कर दिया जाता है।

(६७) राष्ट्र कूट वंश के भूपति जैनधर्म के उपासक ही नहीं पर प्रचारक थे।

(६८) चालुक्यवंशी नृपति जैनधर्म के पालक थे जिसमें प्रथम पुलकेशी राजा का नाम विशेष प्रसिद्ध है।

(६९) कलचूरी वंश के बहुत राजा जैनधर्मोपासक थे जिसमें महाराजा विज्जलदेव का नाम अग्रेश्वर है।

(७०) पल्लववंशी नृपति जैन धर्म के परमोपासक थे जिसमें महाराजा महेन्द्रवर्मा का नाम मशहूर है।

(७१) होयलवंश के अनेक राजाओं ने जैन धर्म का पालन किया।

(७२) कदम्बवंशी राजा जैनधर्म के पक्के अनुयायी थे।

(७३) गंगवंशीय नृपति जैनधर्म के प्रचारक थे।

(७४) पाड्यवंशी राजा जैनधर्म के अराधक थे।

(७५) चोलवंश के भूपति भी जैनधर्मी थे।

"प्राचीन जैन स्मारक नामक ग्रंथ से"

(७६) एलाचीपुर के महाराजा एलक—जैनराजा

इस नृपति ने आन्तरिक पार्श्वनाथ की मूर्ति को स्थापन की थी और जैनधर्म की प्रभावना करने में अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया था ।

"प्रगट प्रभाविक पार्श्वनाथ नामक ग्रंथ"

(७७) पाटण का राजा चमूंडराय—जैनराजा

पाटण का राजा चमूंड राय आचार्य वीरगणी का परम भक्त था

"प्रभाविक चरित्र"

(७८) धारानगरी का राजा भोज—जैनराजा

धारानगरी का राजा भोज महान् विद्वान् थे और विद्वानों का खूब सत्कार किया करते थे, कवि धनपाल के संसर्ग से वे जैनधर्म के साथ पूर्ण सहानुभूति रखते ही थे पर एक समय वादी वेताल शान्तिसूरि विहार करते धारानगरी पधारे । आचार्य श्री यों तो प्रत्येक विषयके बड़ेभारी विद्वान थे पर आपकी कवित्व शक्ति इतनी अलौकिक थी कि जिसके प्रभाव से राजा भोज और उन की सभा के पण्डितों को मुग्ध बना दिये थे । राजा भोज अपनी कवित्व शक्ति से प्रसन्न हो एक लाख मुद्राएं उपहार में दी आचार्य श्री त्यागी होने के कारण उसे स्वयं स्वीकार न कर जैन मन्दिरों के कार्य में लगा देने का उपदेश दिया और राजा ने स्वीकार भी कर लिया ।

"प्रभाविक चरित्र"

(७९) करणाटक का राजा जयकेशी—जैनराजा

यह नृपति आचार्य कुमन्दचन्द्र का परम उपासक था।

"प्रा० च०"

(८०) नारदपुरी का राव दूधा—जैनराजा

आचार्य श्री यशोदेव सूरि एक समय नारदपुरी (नाडिल) नगरी में पदार्पण किया वहाँ का शासनकर्ता राव लाखण था जिसके लघु बान्धव राव दूधाजी थे जिनको उपदेश देकर जैन बनाये जिनकी सन्तान ओसवाल ज्ञाति में वीरभंडारियों के नाम से मशहूर है।

"चौहानों का इतिहास"

(८१) सिन्धुप्रान्त का डमरेल नगर का राजा—जैनराजा

आचार्य कक्कसूरि एक वख्त सिन्धु प्रान्त में पधारे थे वहाँ के श्राद्धवर्ग ने आपका अच्छा स्वागत किया, आपका धर्मोपदेश हमेशा होता था वहाँ के नरेश ने आचार्य श्री की विद्वता की प्रशंसा सुन के अपने वहाँ बुलाकर धर्म देशना सुनी जिसका प्रभाव राजा पर इतना हुआ कि उसने मांस मदिरादि कुव्यसनों का त्याग कर जैनधर्म को स्वीकार कर अहिंसा धर्म का खूब प्रचार किया।

"उपकेशगच्छ चरित्र"

(८२) मारोटकोट का राजा सिंहवली—जैनराजा

यह नृपति आचार्य कक्कसूरि का परमोपासक और जैन धर्म का प्रचारक थे।

"उपकेश गच्छ चा०"

(८३) नागपुर का राजा अल्हदन—जैनराजा०

आचार्य वादीदेवसूरि जैन समाज में एक महान् प्रभावशाली और न्यायवेता सर्वत्र प्रख्यात हैं आप सपादलक्ष में विहार कर जैन धर्म का खुब ही प्रचार किया नागपुर (नागौर) का राजा अल्हदन को धर्मोपदेश दे जीवहिंसा के बज्रपाप से बचाकर जैन धर्म का अनुयायि बनाया—फलोदी पार्श्वनाथ के मंदिर की प्रतिष्टा वि० सं० १२०४ में आपही ने करवाई ।

"प्रभाविक चरित्र ।

(८४) पाट्टण का राजा सिद्धराज जयसिंह–जैनराजा०

यह नृपति कालिकाल सर्वज्ञ आचार्य हेमचन्द्रसूरि का परम भक्त था आचार्य श्री का व्याख्यान अपनी राज सभा में करवा के आप हमेशा जिनवाणि का पान किया करते थे इसी नृपति ने तीर्थधिराज श्री सत्रुँजय को यात्रा कर १२ ग्राम भेट में दिया था ।

"प्रभाविक चरित्र"

(८५) पाट्टण का महाराजा कुमारपाल—जैनराजा

महाराजा कुमारपाल के गुरु कलिकाल सर्वज्ञ भगवान् हेमचन्द्राचार्य थे, गुजरेश कुमारपाल ने अठारा देशों में अहिंसा भगवती का झंडा फहराया था, जैनधर्म का प्रचार करने में भरसक प्रयत्न किया था हजारों मन्दिरों का जीर्णोद्धार और हजारों नया मन्दिर बनवाके पुन्योपार्जन किया था स्वाधर्मी भाइयों की ओर आपका विशेषलक्षथा आपके राजत्व काल में गुर्जर देश बड़ा ही समृद्ध-

शाली था केवल पाट्टण में १८०० कोडाधिप और हजारों लक्षा-धिप श्रावक वसते थे आपने श्री शत्रुँजयादि तीर्थों की यात्रार्थ विराट् संघ निकाल था जिसका विस्तृत वर्णन उस समय के बने हुए ग्रन्थ में विद्यमान हैं जिसको सुनकर मनुष्य चिकित हो जाता है इन नृपति के राजत्व काल में जीवहिंसा बिलकुल बन्ध थी इतना ही नहीं पर कूंवे तलावों पर पाणी के लिये गरणीये बन्धाई गईथी कि मनुष्यतो क्या पर पशु भी अन छना पाणी नहीं पी सके इस धर्म के प्रभाव ही उस समय जनता में सुख और शान्ति चल रही थी, महाराज कुमारपाल जैसे धर्मवीर थे वैसे ही वह कर्मवीर भी थे अपने राज की सीमा इतनी विस्तृत बना दि थी कि पाट्टण बसने के बाद किसी राजाने नहीं बनाई इत्यादि इनका चरित्र बहुत विस्तृत है पर हमारा उद्देश्य इस ग्रन्थ को संक्षिप्त से ही लिखने का है

"प्र० च०"

(८६) चन्द्रावती का राजा जैत्रसिंह—जैनराजा

आचार्य रूपदेवसूरि ने अपना प्रभावशाली उपदेश द्वारा चन्द्रावती का नृपति जैत्रसिंह को जैन धर्म में दिक्षित किया ।

(८७) शाकम्भरी का राजा प्रथुन—जैनराजा

आचार्य धर्मघोष सूरि भू भ्रमन करते हुए शाकम्भरी नगरी में पधारें वहाँ का नृपति प्रथुन राजा ने आपका बड़ा ही आदर सत्कार किया आचार्य देव ने राजादिकों जैनधर्म का तत्त्वज्ञान

और विशेष में अहिंसा धर्म का उपदेश दिया और राजा उसे स्वीकार कर जैनधर्मोपासक बनगया।

"तपागच्छ पट्टावलि"

(८८) सुवर्णगिरी का राजा समरसिंह—जैनराजा

यह नृपति आचार्य अजितदेव सूरि का परमभक्त था।

"त० प०"

(८९) मंडोबर का राव मोहेणसिंह—जैनराजा

आचार्य शिवशर्मा सूरि ने उपदेश देकर राठौड राव माहेण-सिंह को जैनधर्म की शिक्षा दिक्षा देकर जैन बनाये मोहेणसिंह की सन्तान मुनोंयतों के नाम से ओसवाल ज्ञाति में प्रसिद्ध है।

"मेहताजी का जीवन"

(९०) कलिंग का राजा प्रतापरुद्र—जैनराजा

उडीसा की गुफाओं के शिलालेख से पाया जाता है कि विक्रम की शोलहवीं शताब्दी में कलिंग में राजा प्रतापरुद्र नामक राजा था और यह नृपति जैनधर्म का परमोपासक थे।

(९१) दहलीपति बादशाह अकबर—

जगत् गुरु भट्टारक जैनाचार्य विजय हीर सूरीश्वर ने बादशाह अकबर को प्रतिबोध कर एक वर्ष में छः मास जीवदय के पट्टे परवाने करवाये तथा जैनतीर्थों की रक्षा के लिये भी अनेक फरमान प्राप्त किये इसका विस्तृत वर्णन सूरीश्वर और सम्राट नामक ग्रन्थ में है।

(शेष आगे के भागों में)

पढ़ लीजिये।

श्रीसंघ—शिवगंज की ओर से ज्ञानखाते के रु० ५००) का हिसाब।

१७० =)	आदर्श शिक्षा की लिखाई छपाई वगैरह	पुस्तकें	१००
५४ ।=)	प्राचीन जैन इतिहास संग्रह भाग पहला	"	१००
१३०॥।=)	" " " " " दूसरा	"	१००

(इस पुस्तक के अलावा दो फ़ार्म तथा लिखाई का खर्चा भी शामिल है

६० ।≡)	प्राचीन जैन इतिहास संग्रह भाग तीसरा	पुस्तकें	१००
४७॥।)	" " " " " चौथा	"	१००
१८ ।)	रेल्वे पासलसे कापरड़ाजी व फलोदी पुस्तकें आईं जिनका खर्च		
१०)	पर्युषणों की क्षमापना पत्रिकाएं ५०० के।		
८ ≡)	बचत रहा वह ज्ञानखाते लगाया गया		
५००)			

शाह हीराचन्दजी पोरवाल का ज्ञानखाता के रु० २५०) का हिसाब।

९९॥≡)।	श्री ज्ञानचौबीसी पुस्तक १००० की छपाई
१२०॥≡)	जड़ चैतन का सम्वाद १५०० की छपाई
१८॥–)	रेलवे पार्सल से पु तकें आईं जिनका खर्चा
११)॥।	पुस्तकें ३ आईं जिनका वी+पी खर्च
२५०)	

आपका

जोरावरमल वैद्य मुहता

फलोदी (मारवाड़)

आदर्श प्रेस (केसरगंज डाकखाने के पास) अजमेर में छपी।

ओसवाल समाज के इस प्रेस में छपाई बहुत उमदा, जल्दी और सस्ती होती